Con. 3. VII. 28. 48
350

अंक 7
संख्या 28

बुधवार,
29 दिसम्बर
सन् 1948 ई.

भारतीय विधान-परिषद्

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

पृष्ठ

प्रतिज्ञा-ग्रहण तथा रजिस्टर पर हस्ताक्षर

विधान का मसौदा-(जारी)..... 1871-1927

[अनुच्छेद 55, 56, 57, 58, 59 और 60 पर विचार-विमर्श]

भारतीय विधान-परिषद्

बुधवार, 29 दिसम्बर सन् 1948 ई.

भारतीय विधान-परिषद् कांस्टिट्यूशन हाल, नई दिल्ली में प्रातः दस बजे समवेत् हुई। उपाध्यक्ष महोदय (डॉ. एच.सी. मुकर्जी) अध्यक्ष-पद पर आसीन थे।

प्रतिज्ञा-ग्रहण तथा रजिस्टर पर हस्ताक्षर

निम्नलिखित सदस्यों ने प्रतिज्ञा-ग्रहण की और रजिस्टर पर हस्ताक्षर किये:

1—श्रीमती ऐनी मैसकरीन (त्रावणकोर)

2—श्री सीताराम जाजू [संयुक्त राज्य—ग्वालियर-इंदौर-मालवा (मध्यभारत)]

विधान का मसौदा—(जारी)

अनुच्छेद 55—(जारी)

***उपाध्यक्ष** (डॉ. एच.सी. मुकर्जी): अब हम अनुच्छेद 55 पर आगे विचार-विमर्श आरम्भ करते हैं। श्री भारती।

***श्री एल. कृष्णस्वामी भारती** (मद्रास : जनरल): उपाध्यक्ष महोदय, अनुच्छेद 55 पर सामान्य बहस हो रही है। सभा को स्मरण होगा कि कल मि. नज़ीरुद्दीन अहमद ने अपने नाम से एक संशोधन अर्थात् संशोधन संख्या 1220 को उपस्थित किया था। यद्यपि हम उनके संशोधन को सीधे-सीधे स्वीकार नहीं कर सकते हैं परन्तु मैं यह अनुभव करता हूं कि उनका तर्क बहुत बलशाली है। वे अपने संशोधन द्वारा अनुच्छेद 55 से 'अनुपाती प्रतिनिधित्व' शब्दों को निकालना चाहते थे। जहां तक मैं उन्हें समझ पाया हूं, मेरे विचार से उन्हें मत के संक्रमण के संबंध में कोई आपत्ति नहीं है परन्तु यह प्रणाली जिन शब्दों में रखी गई है उन्हें वे ठीक नहीं समझते हैं। वास्तव में उन्होंने यह कहा था कि जब एक ही उम्मीदवार चुना जाने वाला हो तो अनुपाती प्रतिनिधित्व का प्रश्न ही नहीं उठता। जिस निर्वाचन-क्षेत्र से एक ही सदस्य चुना जाने वाला हो उसके

---

*इस चिह्न का अर्थ है कि यह अंग्रेजी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

[श्री एल. कृष्णास्वामी भारती]

संबंध में अनुपाती प्रतिनिधित्व का विचार निरर्थक है। इसका अर्थ यह है कि अन्तिम निर्वाचन में एक प्रकार का अनुपात होना चाहिए। निर्वाचकों की संख्या के अनुपात के अनुसार जगहें निश्चित की जाती हैं। इसीलिये उनको 'अनुपाती प्रतिनिधित्व' शब्दों से आपत्ति है।

मैंने इस विषय के संबंध में कुछ साहित्य पढ़ा और मैंने यह अनुभव किया कि उन्होंने जो कुछ कहा है उसमें बहुत बल है। इंग्लैण्ड में भी इसी कठिनाई का अनुभव किया गया और सभी निर्वाचन-प्रणालियों के प्रश्न पर विचार करने के लिये एक शाही कमीशन बिठाया गया था। इसके फलस्वरूप सन् 1908 ई. में कामन्स सभा में मि. राबर्टसन ने दो विधेयक उपस्थित किये थे और यह विचार किया गया था कि 'अनुपाती प्रतिनिधित्व' शब्द उपयुक्त शब्द नहीं हैं। यह प्रणाली अर्थात् संक्राम्य मत-प्रणाली उस स्थिति के लिये उपयुक्त प्रमाणित होती है जब एक से अधिक उम्मीदवार होते हैं। किन्तु जब एक ही उम्मीदवार को निर्वाचित करना होता है तो यह स्पष्ट है कि प्रत्यक्ष बहुमत को प्राप्त करने के लिये हमें संक्रमण की व्यवस्था को स्वीकार करना होगा। यह एक निश्चित बात है। एक-सदस्य निर्वाचन-क्षेत्र के संबंध में उन्होंने उपयुक्त शब्द ढूंढ निकाले हैं। उपयुक्त शब्द हैं "वैकल्पिक मत"। श्रीमान्, आपकी अनुमति से मैं इस विषय पर एक अधिकृत लेखक—हम्फ्रीज—की राय बताना चाहता हूं। वह लेखक यह कहता है:

"पिछले कुछ वर्षों से 'वैकल्पिक मत' शब्द इंग्लैण्ड में प्रयोग में रहे हैं और इन्हें निर्वाचन प्रणालियों के संबंध में बिठाये हुये शाही कमीशन ने एक-सदस्य निर्वाचन-क्षेत्र तथा बहुसदस्य निर्वाचन-क्षेत्र के संक्राम्य मत में अन्तर करने के लिये स्वीकार किया था।

बहुसदस्य निर्वाचन-क्षेत्रों को अलग प्रकार का समझा गया है और "अनुपाती प्रतिनिधित्व" शब्दों का भी विशेष अर्थ लगाया गया है। इस प्रकार यद्यपि संक्रमण-व्यवस्था को समान रूप से रखा गया है किन्तु एक-सदस्य निर्वाचन-क्षेत्रों को बहुसदस्य निर्वाचन-क्षेत्रों से विशिष्ट बनाने के लिये "वैकल्पिक मत" शब्दों का प्रयोग किया गया है। मि. राबर्टसन के विधेयक के स्मृति-पत्र में आगे यह कहा गया है कि "वैकल्पिक मत का सिद्धान्त बहुत सरल है"। मि. राबर्टसन के विधेयक के स्मृति-पत्र में उसका उद्देश्य तथा उसकी प्रणाली इस प्रकार वर्णित है:

"उद्देश्य यह है कि किसी संसदात्मक निर्वाचन में ऐसी व्यवस्था की जाये कि जहां तक संभव हो निर्वाचकों के बहुमत की इच्छाओं का प्रभाव हो। वर्तमान प्रणाली के अधीन जब एक ही जगह के लिये दो से अधिक उम्मीदवार होते हैं तो इसकी संभावना रहती है कि निर्वाचित सदस्य निर्वाचकों के अल्पमत से चुना जाये।

इस विधेयक का उद्देश्य यह है कि ऐसी व्यवस्था की जाये कि निर्वाचक अपने मत-पत्रों में इसका संकेत कर सकें कि यदि उनकी पहली पसन्द का उम्मीदवार का मत-पत्र में तीसरा अथवा उससे भी बाद का स्थान हो और किसी भी उम्मीदवार का प्रत्यक्ष बहुमत न हो तो वे किस उम्मीदवार के पक्ष में अपने मतों का संक्रमण चाहेंगे। इस प्रकार एक ही व्यवस्था से दूसरे मत-पत्र का भी प्रभाव हो जाता है।"

इसलिये मेरे विचार से इन शब्दों से, जो न केवल इंग्लैण्ड में बल्कि आस्ट्रेलिया के राज्यों में भी सन् 1911 ई. से प्रचलित रहे हैं, लाभ उठाना चाहिये और इन्हें अपने विधान में प्रविष्ट कर लेना चाहिये ताकि एक-सदस्य निर्वाचन-क्षेत्र और बहुसदस्य निर्वाचन-क्षेत्रों में अन्तर किया जा सके और 'अनुपाती प्रतिनिधित्व' शब्दों की अनर्गलता का निराकरण हो जाये।

संभव है कि इस सुझाव को सीधे-सीधे स्वीकार न किया जा सके परंतु मैं डॉ. अम्बेडकर और वैधानिक सलाहकार श्री बी.एन. राव से यह प्रार्थना करता हूं कि इस पर विचार किया जाये, जबकि उपयुक्त शब्द हैं और वे इंग्लैण्ड में प्रचलित रहे हैं तो कोई कारण नहीं है कि हम उन्हें स्वीकार न करें। आखिर यह बताने के लिये कि इस प्रणाली का क्या अर्थ है हमें कुछ नियम बनाने ही हैं और कोई कार्य-प्रणाली निश्चित करनी ही है। एकल संक्राम्य मत की भी कई प्रणालियां हैं जैसे हेयर प्रणाली इत्यादि। इस अन्तर को स्पष्ट करने के लिये हमें कोई विधेयक उपस्थित करना होगा अथवा कोई नियम निश्चित करना होगा।

यह आपत्ति की जा सकती है कि अब हम 'अनुपाती प्रतिनिधित्व' शब्दों से तो परिचित हैं ही। किन्तु मेरा निवेदन यह है कि हम एक-सदस्य निर्वाचन-क्षेत्रों के संबंध में इस प्रणाली से परिचित नहीं हैं और पहली बार ही हम एक-सदस्य निर्वाचन-क्षेत्रों को स्थापित कर रहे हैं। इसलिये उचित तो यह होगा कि निर्वाचन-प्रणाली संबंधी शाही कमीशन द्वारा स्वीकृत 'वैकल्पिक मत' शब्दों पर विचार किया जाये। श्रीमान्, आपको धन्यवाद।

***उपाध्यक्ष:** डॉ. अम्बेडकर!

***माननीय डॉ. बी. आर. अम्बेडकर** (बम्बई : जनरल): उपाध्यक्ष महोदय, मुझे इसका खेद है कि इस अनुच्छेद के संबंध में जो संशोधन उपस्थित किये गये हैं उनमें से मैं किसी को भी स्वीकार नहीं कर सकता हूं। जहां तक सामान्य विचार-विमर्श का संबंध है मेरे विचार से केवल दो संशोधनों का उत्तर देने की आवश्यकता है। पहला संशोधन मि. ताहिर का संशोधन संख्या 1215 है। मि. ताहिर ने अपने संशोधन द्वारा यह प्रस्ताव किया है कि प्रधान के लिये जो प्रणाली निर्धारित की गई है वही प्रणाली उप-प्रधान के निर्वाचन के लिये भी प्रयोग में लाई जाये। श्रीमान्, विधान के मसौदे में प्रधान के निर्वाचन और उप-प्रधान के निर्वाचन में जो अन्तर किया गया है वह इस कारण किया गया है कि इन दो व्यक्तियों के कार्य भिन्न हैं। प्रधान राज्य का प्रमुख है और उसकी शक्तियां केवल केन्द्र ही के प्रशासन के संबंध में नहीं हैं बल्कि राज्यों के प्रशासन के संबंध में भी हैं। इसलिये यह आवश्यक है कि उसके निर्वाचन में न केवल संसद् के सदस्य भाग लें बल्कि राज्यों के विधान-मण्डलों के सदस्य भी भाग लें। किन्तु उप-प्रधान को केवल राज्य-परिषद् में ही सभापतित्व करना होता है। बहुत कम अवसरों पर ही और वह भी थोड़े काल के लिये ही उसे प्रधान के कर्त्तव्यों का पालन करना होता है। इस स्थिति में यह आवश्यक प्रतीत नहीं होता कि उप-प्रधान के निर्वाचन में भाग लेने के लिये राज्यों के विधान-मण्डलों के सदस्यों को भी आमन्त्रित किया जाये। इसी तर्क को सामने रख विधान के मसौदे में इन दो व्यक्तियों के निर्वाचन के प्रकार में अन्तर किया गया है।

दूसरा संशोधन, जिसका उत्तर देने की आवश्यकता है, मि. नज़ीरुद्दीन अहमद का संशोधन संख्या 1219 है। उन्होंने यह सुझाव रखा है कि 'assembled' (एकत्रित) शब्द को निकाल दिया जाये। इस अनुच्छेद में इस शब्द को इस कारण रखा गया है कि मत-पत्रों को डाक से भेजने की प्रथा न अपनाई जाये। हम सभी जानते हैं कि यदि निर्वाचन के कार्य के लिये डाक के साधन से काम लिया गया तो वह असफल हो जायेगा। मत-पत्र निश्चित स्थान पर नहीं पहुंच सकते हैं अथवा रास्ते में खो भी सकते हैं। यह भी संभव है कि कोई उम्मीदवार अपने कार्यकर्ताओं को मत-पत्र एकत्रित करने के लिये चारों ओर भेज दे और वह उन्हें लेकर स्वयं उन पर हस्ताक्षर कर दे और भेज दे जिससे निर्वाचन के संबंध में निर्वाचक को अपना मत-प्रकाश करने की कोई स्वतन्त्रता ही नहीं रहेगी। इसी कारण यह निश्चय किया गया था कि निर्वाचन उसी समय हो जब दोनों सभाओं के सदस्य एकत्रित हों ताकि डाक के साधन का दुरुपयोग न किया

जा सके। मेरे विचार से इस कार्य के लिए संसद् के सदस्यों की एक बैठक करने में न कोई कठिनाई होगी और न कोई असुविधा ही। आखिर संसद् के सदस्य कानून बनाने के लिये एकत्रित होंगे ही और इस उद्देश्य से जो अधिवेशन होंगे उनमें से किसी में भी निर्वाचन किया जा सकता है। इसलिये मेरा यह निवेदन है कि इस स्थिति में मसौदे की भाषा ही अधिक उपयुक्त है।

श्रीमान्, जहां तक प्रोफेसर के.टी. शाह के इस आशय के संशोधन का संबंध है कि उप-प्रधान के पद के लिये जो अयोग्यतायें हैं उनका उल्लेख विधान में होना चाहिये। मैंने इस संबंध मैंने उस समय उत्तर दे दिया था जब उन्होंने प्रधान के संबंध में इसी प्रकार का संशोधन उपस्थित किया था। उस समय मैंने यह कहा था कि संसद् कानून द्वारा इस प्रकार की व्यवस्था कर सकती है।

श्री भारती और मि. नज़ीरुद्दीन अहमद ने 'वैकल्पिक मत' शब्द प्रयोग करने के संबंध में जो सुझाव रखा है उसके संबंध में मैं केवल यह कह सकता हूं कि यह प्रश्न केवल भाषा के अन्तर का है और संभवत: मसौदा-समिति बाद को इस प्रश्न पर विचार कर सके। परन्तु, चूंकि मैं किसी प्रकार का वचन नहीं देना चाहता, यदि वैकल्पिक मत से कोई सारपूर्ण परिवर्तन हो तो इस पर किसी समय भी विचार करना संभव न होगा।

***उपाध्यक्ष:** अब मैं विभिन्न संशोधनों पर अलग-अलग मत लूंगा।

प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 55 के खण्ड (1) के स्थान में निम्नलिखित रखा जाये:

'(1) The Vice-President shall be elected in the same manner as provided in article 43.'"

[(1) उप-प्रधान उसी प्रकार निर्वाचित किया जायेगा जैसे अनुच्छेद 43 में प्रावहित किया गया है।

संशोधन गिर गया।

***उपाध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 55 के खण्ड (1) में 'assembled at a joint meeting' (संयुक्त अधिवेशन में एकत्रित) शब्दों से निकाल दिया जाये और संशोधित खण्ड की पुनर्गणना अनुच्छेद 55 के रूप में की जाये।"

संशोधन गिर गया।

***उपाध्यक्ष:** संशोधन संख्या 1220, जो मि. नज़ीरुद्दीन के नाम से है।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद** (पश्चिमी बंगाल : मुस्लिम): श्रीमान्, इस आश्वासन को दृष्टि में रखते हुये कि मसौदा-समिति इस पर विचार करेगी, मैं इसे उपस्थित नहीं करना चाहता हूं।

***उपाध्यक्ष:** क्या सभा इसकी आज्ञा देती है कि इसे मतदान के लिये उपस्थित न किया जाये?

(सभा की अनुमति से संशोधन वापस ले लिया गया।)

***उपाध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 55 के खण्ड (2) में 'either of Parliament or' (न तो संसद् का और न किसी राज्य के विधान-मण्डल का) शब्दों के स्थान में 'of either House of Parliament or of a House' (न तो संसद् की किसी सभा का न किसी राज्य के विधान-मण्डल की किसी सभा का) शब्द, 'member of Parliament or' (संसद् अथवा किसी राज्य के विधान-मण्डल का सदस्य) शब्दों के स्थान में 'member of either House of Parliament or of a House' (संसद् की किसी सभा अथवा किसी राज्य के विधान-मण्डल की किसी सभा का सदस्य) शब्द और 'in Parliament or such legislature, as the case may be' (संसद् का अथवा उस विधान-मण्डल का अपना स्थान, जैसी कि स्थिति हो) शब्दों के स्थान में 'in that House' (उस सभा का अपना स्थान) शब्द रखे जायें।"

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***उपाध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 55 के खण्ड (3) के उपखण्ड (ग) में 'Council of State' (हिन्दी में—पात्र न हो) शब्दों के बाद निम्नलिखित रखा जाये:

'and is not disqualified by reason of any conviction for treason, or any offence against the safety, security or integrity of the State, or any violation of the

Constitution or has been elected and served more than once as President or Vice-President of the Union.'"

(और राजद्रोह अथवा राज्य के क्षेत्र, अभिरक्षण तथा अक्षुण्णता को भंग करने के किसी अपराध अथवा कानून को भंग करने के लिये दण्डित होने की अयोग्यता से मुक्त न हो अथवा ऐसा व्यक्ति भी न हो जो एक बार से अधिक संघ का प्रधान अथवा उप-प्रधान चुन लिया गया हो और इस हैसियत से सेवा कर चुका हो।)"

संशोधन गिर गया।

***उपाध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 55 के खण्ड 4 में जहां कहीं 'or position of emolument' (आय के पद) शब्द आये हों उनके स्थान में 'of profit,' (परिलाभ के पद) शब्द रखे जायें।"

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***उपाध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 55 के खण्ड (4) की व्याख्या के उपखण्ड (क) के स्थान में निम्नलिखित रखा जाये:

'(a) he is the Governor of any State for the time being specified in Part I of the First Schedule or is a minister either for India or for any such State, or.'"

[(क) वह इस समय प्रथम अनुसूची के भाग 1 में उल्लिखित किसी राज्य का शासक है अथवा भारत का अथवा किसी ऐसे राज्य का मन्त्री है; अथवा]

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***उपाध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 55, संशोधित रूप में, विधान का अंग बना लिया जाये।"

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

अनुच्छेद 55, संशोधित रूप में, विधान का अंग बना लिया गया।

अनुच्छेद 56

***उपाध्यक्ष:** अब हम अनुच्छेद 56 को उठाते हैं।

प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 56 विधान का अंग बना लिया जाये।"

पहला संशोधन, संशोधन संख्या 1258 है। पहले विकल्प को उपस्थित करने की आज्ञा नहीं दी जाती क्योंकि उसका संबंध केवल शाब्दिक परिवर्तन से है। दूसरा विकल्प उपस्थित किया जा सकता है।

(संशोधन संख्या 1258 का दूसरा विकल्प उपस्थित नहीं किया गया।)

प्रोफेसर शाह—संशोधन संख्या 1259 ।

***प्रोफेसर के.टी. शाह** (बिहार : जनरल) : उपाध्यक्ष महोदय, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करना चाहता हूं कि:

"अनुच्छेद 56 की गणना अनुच्छेद के खण्ड (1) के रूप में की जाये और उसके बाद निम्नलिखित नये खण्ड जोड़ दिये जायें:

'(2) The Vice-President shall have an official residence and there shall be paid to the Vice-President such emoluments and allowances, not exceeding those granted to the President, as may be determined by Parliament by law, and until provision in that behalf is made by Act of Parliament, the Vice-President shall be paid a monthly salary of Rs. 4,500.

(3) The emoluments and allowances of the Vice-President shall not be diminished during his term of office.

(4) Every Vice-President, on completion of his term of office and retirement shall be given such pension or allowance during the rest of his life as Parliament may by law determine, provided that, during the life

time of any such Vice-President in retirement and pensioned, such pension or allowance shall not be diminished.'

[(2) उप-प्रधान का एक सरकारी निवास-गृह होगा और उसे ऐसे परिलाभ और भत्ते दिये जायेंगे जो प्रधान को दिये जाने वाले परिलाभ और भत्तों से अधिक न होंगे और जिन्हें संसद् कानून द्वारा निश्चित करेगी और जब तक संसद् के कानून द्वारा व्यवस्था न की जाये उप-प्रधान को 4,500 रु० का मासिक वेतन दिया जायेगा।

(3) उप-प्रधान के परिलाभ तथा भत्ते उसकी पदावधि में कम नहीं किये जायेंगे।

(4) प्रत्येक उप-प्रधान को उसकी पदावधि समाप्त होने पर तथा उसके अवकाश ग्रहण करने पर उसके अवशेष जीवन-काल में ऐसा उत्तर-वेतन तथा भत्ता दिया जायेगा जिसे संसद् कानून द्वारा निश्चित करे परन्तु किसी ऐसे अवकाश ग्रहण किये हुये और उत्तर-वेतन पाने वाले उप-प्रधान के जीवन-काल में यह उत्तर-वेतन अथवा भत्ता कम नहीं किया जायेगा।]

सभा के सम्मुख इस प्रस्ताव को उपस्थित करते हुये मैं तीन तर्क उपस्थित करना चाहता हूं और मुझे आशा है कि सभा उन्हें पसन्द करेगी। उप-प्रधान के लिये निवास-गृह की व्यवस्था उतनी ही महत्त्वपूर्ण है जितनी प्रधान के लिये। श्रीमान्, मेरा यह मत है कि उच्च शासनाधिकारियों को मकानों को किराये पर लेने की आवश्यकता न होनी चाहिये और उन्हें मकान-मालिकों से मकान किराये पर लेकर किसी प्रकार उनका कृतज्ञ न होना चाहिये। इस समय किराये की नियन्त्रण-प्रणाली के अधीन दूषित पगड़ी की प्रथा चली हुई है। उससे प्रलोभन हो सकता है और इसलिये उसकी निन्दा ही की जानी चाहिये तथा उच्च पदाधिकारियों को उससे अछूता ही रखना चाहिये। मालिक मकान और किरायेदार के संबंध के कारण यह संभव है कि इस प्रकार के महत्त्वपूर्ण अधिकारी अनुचित रूप से प्रभावित हो जायें और इसका उनके सरकारी कार्य पर भी प्रभाव पड़े, जो एक दूषित बात होगी।

इस प्रकार यह एक साधारण प्रस्ताव है और मुझे विश्वास है कि इस संबंध में किसी को आपत्ति नहीं हो सकती है। वह इस प्रकार है कि उच्च शासनाधिकारियों को, जिनको अधिशासी अथवा अन्य प्रकार की शक्ति प्राप्त हो,

[प्रो. के.टी. शाह]

इस स्थिति में न डालना चाहिये कि वे किसी व्यक्ति की दया पर निर्भर रहें, क्योंकि वह व्यक्ति उनके प्रभाव से लाभ उठाना चाहेगा।

मैं इससे परिचित हूं कि इस विधान के अधीन उप-प्रधान को अधिशासी अथवा परिपोषण की शक्ति नहीं दी गई है और इसलिये यह तर्क उपस्थित किया जा सकता है कि कम से कम उनके लिये जो मुख्य कारण मैंने बताया है वह लागू नहीं होता है। इसके अतिरिक्त मेरा यह निवेदन है कि सर्वोच्च सामाजिक स्थिति तथा महत्त्व की दृष्टि से उप-प्रधान देश में दूसरा व्यक्ति होगा। यदि उन्हें अधिशासी अथवा राजनैतिक परिपोषण की शक्ति न भी प्राप्त हो तो भी वह एक उच्च-पदाधिकारी होगा जिसे सभी प्रलोभनों से दूर रखना आवश्यक है। यदि उनके अधिकार के दुरुपयोग से लोक-सेवा को किसी प्रकार भी हानि पहुंचने की संभावना हो और किसी व्यक्ति विशेष को लाभ होने की संभावना हो तो उससे उसे दूर ही रखना चाहिये।

दूसरा तर्क उप-प्रधान के वेतन और भत्तों के संबंध में है। मेरे संशोधन के अनुसार संसद् के कानून के द्वारा इसकी व्यवस्था की जा सकती है। बात यह नहीं है कि यह व्यवस्था संसद् में कोई प्रस्ताव उपस्थित करके की जायेगी क्योंकि प्रस्ताव केवल बहुसंख्यक दल के बहुमत से भी स्वीकार हो सकता है और यह भी नहीं है कि यह एक तदर्थ तत्कालीन निर्णय होगा जो समय-समय पर बदला जा सकता है। मैं इसे भी कानून द्वारा निश्चित कराना चाहता हूं। मैं यह चाहता हूं कि कानून इस संबंध में बिल्कुल स्पष्ट हो कि उप-प्रधान की पदावधि में उसके वेतन, भत्तों तथा परिलाभ में कोई ऐसा परिवर्तन न किया जायेगा जिससे उसे हानि हो और न वे किसी प्रकार कम किये जायेंगे।

मैं जिस शब्दावली को प्रयोग में लाया हूं वह इससे कुछ भिन्न है। वह इस प्रकार है कि 'ऐसा परिवर्तन न किया जायेगा जिससे उसको हानि हो।' मैंने केवल यह सुझाव रखा है कि इन आंकड़ों को कम न किया जायेगा। इस पर भी आपत्ति की जा सकती है। उप-प्रधान राज-सभा का प्रधान होगा और उसके अन्य प्रकार के भी सक्रिय कर्त्तव्य तथा संभवत: कुछ प्रकार्य भी होंगे। इसके अतिरिक्त उसका सामाजिक स्थान ऊंचा होगा और उसको उसे बनाये रखना होगा। साथ ही उसका स्थान अलंकारपूर्ण भी है और वह पूरे समय के लिये अधिकारी समझा जायेगा। इसलिये उसे किसी ऐसे निजी व्यापार, वाणिज्य, उद्योग, वृत्ति अथवा व्यवसाय में संलग्न रहने की आज्ञा न होनी चाहिये जिससे उसे अपने कर्त्तव्यों

की उपेक्षा करनी पड़े। इसलिये यह आवश्यक है, उसके लिये उपयुक्त वेतन तथा परिलाभ की व्यवस्था होनी चाहिये।

मैंने इस प्रकार का एक सीमा-बोधक खण्ड भी रखा है कि यह वेतन प्रधान के वेतन से अधिक न होना चाहिये। किन्तु वह इतना अवश्य होना चाहिये कि उप-प्रधान जैसे पदाधिकारी का जो स्थान समझा जाता है उसे वह सम्मानपूर्वक बनाये रखे।

अन्त में मैंने यह कहा है, जैसा कि मैंने प्रधान के संबंध में भी प्रस्ताव किया था, कि उप-प्रधान को उत्तर-वेतन अर्थात् अवकाश-काल का भत्ता दिया जाना चाहिये। पहले एक अवसर पर मैंने यह कहा था कि इस देश में इन उच्च पदों पर धनी लोगों का ही एकाधिपत्य न होना चाहिये। उनको किसी भत्ते की अथवा अवकाश-काल में किसी प्रकार की व्यवस्था की आवश्यकता नहीं हो सकती है क्योंकि अन्य साधनों से वे अपने लिये पर्याप्त व्यवस्था कर सकते हैं और इसलिये उत्तर-वेतन के रूप में राज्य द्वारा जो थोड़ा-बहुत धन मिले उसकी भी उन्हें चिन्ता नहीं हो सकती है।

मुझे आशा है कि हमारी सरकार पर जो दोष लगाया जाता है वह इस विधान के अधीन न लगाया जा सकेगा और उसके लिये यह न कहा जा सकेगा कि वह केवल धनिकों की सरकार है और उसका संचालन धनिकों द्वारा, धनिकों के लिये ही होता है। कम से कम सैद्धान्तिक रूप से तो यह होना ही चाहिये कि विधान के अधीन सरकार ने सभी के लिये समान अवसरों की व्यवस्था की है और इसलिये देश का गरीब से गरीब नागरिक इन पदों के लिये उम्मीदवार हो सकता है और उन्हें स्वीकार करने में उसे गरीबी में पड़ जाने अथवा ऋण से लद जाने का भय न रहेगा।

इसलिये मेरी यह इच्छा है कि ऐसे अधिकारियों के अवकाश-काल के लिये उचित व्यवस्था की जाय ताकि वे किसी प्रलोभन में न पड़े और गरीबी से पीड़ित न रहें और जीवन-पर्यन्त देश की सेवा करने के उपरान्त यदि सम्पन्नता में नहीं तो कम से कम शान्ति और सुख से अपना अवशेष जीवन बिता सकें।

मेरी यह इच्छा नहीं है कि इन व्यक्तियों को ऐसी सम्पन्नता प्राप्त हो जो देश के अन्य लोगों को प्राप्त न हो। परन्तु मैं इस विचार को भी छिपाना नहीं चाहता कि यदि कोई व्यक्ति इस पद पर पूरे काल के लिये एक बार भी रहा तो उसे उत्तर-वेतन दिया जाना चाहिए।

[प्रो. के.टी. शाह]

पहले एक अवसर पर, जब मैंने सभा के सम्मुख इसी प्रकार का एक प्रस्ताव रखा था, यह तर्क उपस्थित किया गया था कि मैं इस संबंध में सावधान नहीं रहा हूं कि यदि वही व्यक्ति दुबारा उसी पद पर रहे अथवा किसी अन्य पद पर रहे और अपने पदकारणात् वेतन इत्यादि पाता रहे तो उसके संबंध में क्या होगा? मुझे विश्वास है कि इस प्रकार की आपत्ति करने वाले लोगों को साधारण बुद्धि से ही यह ज्ञात हो जायेगा कि यदि वे किसी पद पर होंगे तो इस प्रकार का उत्तर-वेतन न दिया जा सकेगा और न दिया जायेगा। यह प्रत्यक्षत: ऐसा उत्तर-वेतन और भत्ता है जो केवल अवकाश-ग्रहण करने पर और अवकाश-काल में ही दिया जायेगा। इसलिये इस तर्क को सुन कर मुझे आश्चर्य हुआ कि मैंने इसका उल्लेख नहीं किया है कि यदि उदाहरणार्थ प्रधान अवकाश ग्रहण करें और राष्ट्रीय उत्तर-वेतन को पाता हो तो क्या उसे कोई अन्य वेतन दिया जायेगा और यदि वह पुनर्निर्वाचित हो जाये तो क्या इस प्रकार का वेतन उत्तर-वेतन के साथ-साथ दिया जायेगा। मैं यह कह सकता हूं कि यह बात मेरे दृष्टिकोण को तर्कपूर्ण ढंग से समझ कर नहीं कही गई है बल्कि केवल द्वेष के कारण कही गई है। मैं इस प्रकार के द्वेष का निराकरण करने में असमर्थ हूं परन्तु मुझे सभा की सद्भावना पर विश्वास है और इसलिये मैं उससे सिफ़ारिश करता हूं कि मेरा प्रस्ताव स्वीकार कर लिया जाये।

***उपाध्यक्ष:** दो संशोधन पण्डित ठाकुरदास भार्गव के नाम से हैं। क्या माननीय सदस्य महोदय उन्हें उपस्थित कर रहे हैं?

***पण्डित ठाकुरदास भार्गव** (पूर्वी पंजाब : जनरल): मैं इन दो संशोधनों को नहीं उपस्थित कर रहा हूं।

***उपाध्यक्ष:** संशोधन संख्या 1260, 1261 और 1262 शाब्दिक संशोधन हैं और इसलिये उन्हें उपस्थित करने की आज्ञा नहीं दी जाती है।

संशोधन संख्या 1263 प्रोफेसर के.टी. शाह के नाम से है। इसे उपस्थित किया जा सकता है।

***प्रोफेसर के. टी. शाह:** उपाध्यक्ष महोदय, मैं यह प्रस्ताव करता हूं कि:

"अनुच्छेद 56 के परादिक के पैरा (ख) में 'be removed from his office for' (हिन्दी में—अपने पद से) शब्दों के बाद निम्नलिखित रखा जाये:

'reason duly proved, or for any violation of the Constitution duly established, or for conviction for any offence constituting a disqualification for election to the office of a President, Vice-President, or member of Parliament or for physical or mental incapacity duly certified, or for bribery or corruption, duly proved.' "

(यथाविधि प्रमाणित कारण से, अथवा यथाविधि स्थापित विधान के खण्डन के लिये, अथवा किसी ऐसे अपराध के कारण दण्डित होने के लिये जिसे प्रधान के, उप-प्रधान के अथवा संसद् के सदस्य के पद के निर्वाचन के लिये अयोग्य समझा जाता हो, अथवा यथाविधि प्रमाणित शारीरिक अथवा मानसिक अयोग्यता के लिये अथवा यथाविधि सिद्ध घूसखोरी और भ्रष्टाचार के लिये)

इस संशोधन में बहुत सरल प्रस्ताव सन्निहित हैं किन्तु उन्हें बताना आवश्यक है। श्रीमान्, मेरी धारणा है कि प्रथाओं और रूढ़ियों के न होते हुये यदि आप विधान को और वह भी लिखित विधान को बिना इस प्रकार की संभावनाओं के संबंध में स्पष्ट वक्तव्यों के, इसी प्रकार छोड़ दें तो आप इन खण्डों के दुरुपयोग के लिये तथा विधान को वास्तव में प्रयोग में लाने में जो हथकण्डे दिखाये जा सकते हैं उनके लिये दरवाज़ा खोल देंगे।

उस देश की बात दूसरी है जहां लिखित विधान न होने पर भी ऐसी सुस्थापित प्रथायें तथा रूढ़ियां हैं कि उनसे पदाधिकारियों का अपने कार्य में पथप्रदर्शन होता है। इस देश में हमारे सामने कुछ नहीं है और हम पहली बार विधान बना रहे हैं। इस देश में हमने पहली बार ही लोकाचार के स्वरूप को तथा शासन के सिद्धांतों को निश्चित करने का दायित्व ग्रहण किया है। इस समय जब हम एक लिखित विधान बना रहे हैं, कम से कम मैं इसे उचित नहीं समझता हूं कि हमें ऐसी व्यवस्था करनी चाहिये कि महत्त्वपूर्ण प्रश्नों का निर्णय सामान्य बुद्धि अथवा जनसाधारण के मत तथा औचित्य-ज्ञान ही से हो। मेरा अपना यह विचार है कि विधान में इन विषयों का निर्णयात्मक रूप से उल्लेख होना चाहिये।

इसका परिणाम यह होगा कि उच्च पदाधिकारियों को उल्लिखित कारणों से अपने पदों से हटाया जा सकेगा। जिन कारणों से मैं यह चाहता हूं कि पदाधिकारी अपने पदों से हटाये जायें अथवा उनको अयोग्य घोषित किया जाये, उनका उल्लेख अनेक प्रमुख राष्ट्रों के विधानों में है और अनेक अधीन संस्थाओं के विधानों में जैसे नगर-समितियों के विधानों में तो है ही और इस देश में भी है।

[प्रो. के.टी. शाह]

इस दशा में इस प्रस्ताव के संबंध में कोई आपत्ति नहीं की जानी चाहिये अर्थात् यह न होना चाहिये कि कोई ऐसा व्यक्ति, जो देश-द्रोह के लिये अथवा विधान में उल्लिखित किसी अपराध के लिये अथवा विधान को खण्डित करने के लिये अथवा घूसखोरी और भ्रष्टाचार जैसे नैतिक दुराचार के लिये दण्डित हुआ हो और जिसके संबंध में ये अपराध सिद्ध हो गये हों, अपने पद पर बना रहे।

घूसखोरी और भ्रष्टाचार जैसे नैतिक दुराचार का अपराध बहुत गंभीर है और उसे प्रमाणित करना भी बहुत कठिन है। यह केवल इस कारण कठिन नहीं है कि घूसखोर बहुत सावधानी से घूस लेते हैं बल्कि इसलिये भी कि आसानी से गवाह नहीं मिलते हैं। मैं यह नहीं कहता हूं कि उच्च पदाधिकारियों पर केवल सन्देह होने पर उन पर घूसखोरी का आरोप लगाया जाये और उन्हें दण्डित किया जाय। इसके विपरीत उन्हें कानून द्वारा स्थापित न्यायालयों के सम्मुख यथोचित रूप से उपस्थित किया जाना चाहिये। उन पर नियमानुसार मुकद्दमा चलना चाहिये। उनकी सफाई को पूरी तौर से सुना जाना चाहिये और यदि उनके पास इसके लिये साधन हों तो उन्हें अभियोग से अपने को मुक्त कराने का पूरा अवसर दिया जाना चाहिये। मैं इससे अच्छी प्रकार परिचित हूं कि जिन लोगों का उच्च स्थान होता है अथवा उच्च पदाधिकारी होते हैं, उन्हें शीशे के घरों में रहना होता है। उनके प्रत्येक कार्य पर, प्रत्येक बात पर और प्रत्येक हरकत पर लोग आलोचना करते हैं और उनसे लोगों को भ्रम भी होता है।

इसलिये मैं यह नहीं चाहता हूं कि केवल सन्देह मात्र से ही, उनको निन्दित किया जाये और तुरन्त ही पद से हटा दिया जाये। किन्तु यदि किसी कानून द्वारा स्थापित किसी ऐसे न्यायालय के सम्मुख, जिससे किसी के लिये किसी प्रकार के पक्षपात की आशा नहीं की जा सकती है, यथाविधि मुकद्दमा चलने पर यह सिद्ध हो जाये कि उन्होंने घूस ली है और अनुचित रूप से प्रभावित हुये हैं तो उचित यही होगा कि वे अपने उच्च पदों से हटायें जायें और उन्हें देश के शासन को आगे दूषित न करने दिया जाये।

यही तर्क शारीरिक और मानसिक अयोग्यता के संबंध में भी उपस्थित किया जा सकता है। श्रीमान्, यदि हम इसके प्रति भी उदासीन रहे और हमने इस पर जोर न दिया तो इससे संबंधित पदाधिकारी को तो कोई लाभ न होगा किन्तु उसके अधीनस्थ संस्थाओं को, विभागों को अथवा हितों को हानि हो सकती है।

इसलिये लोक-सेवा, लोक-शील और सुयोग्य शासन के हित ही में मैं यह प्रस्ताव कर रहा हूं कि विधान में स्पष्ट शब्दों में यह प्रावधान रख देना चाहिये कि जो लोग अयोग्य प्रमाणित हों और शारीरिक तथा मानसिक असामर्थ्य के भागी हों उन्हें उनके पदों से हटा देना चाहिये। श्रीमान्, मुझे विश्वास है कि इस पर कोई आपत्ति नहीं की जायेगी और यदि मसौदाकार इसे स्वीकार करना पसन्द न भी करें तो सभा अपनी सद्भावना से इसे स्वीकार कर लेगी।

उपाध्यक्षः श्री कामत के नाम से संशोधन संख्या 1264 और मि. ताहिर तथा सय्यद जाफ़र इमाम के नाम से संशोधन संख्या 1266 तथा मि. महबूब अली बेग के नाम से संशोधन संख्या 1269 का आशय समान है। इनमें से संशोधन संख्या 1264 अधिक विस्तृत प्रतीत होता है और श्री कामत उसे उपस्थित कर सकते हैं। क्या माननीय सदस्य महोदय उसे उपस्थित कर रहे हैं?

***श्री एच.वी. कामत** (मध्यप्रान्त और बरार : जनरल): जी हां, श्रीमान्! मैंने जिन संशोधनों को अलग-अलग भेजा था उन्हें दुर्भाग्य से फिर एक ही जगह रख दिया गया है और इसलिये मुझे कठिनाई हो रही है। मैं इस संशोधन के केवल तीसरे भाग को उपस्थित करना चाहता हूं। इस संशोधन में चार संशोधनों को मिलाकर रख दिया गया है। मैं इसके लिये दफ्तर को दोष नहीं देता हूं.....।

***उपाध्यक्षः** क्या माननीय सदस्य महोदय अन्य तीन संशोधनों को भी उपस्थित करना चाहते हैं?

***श्री एच.वी. कामतः** केवल तीसरे संशोधनों को मैं उपस्थित करना चाहता हूं।

श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

> "अनुच्छेद 56 के परादिक के खण्ड (ख) में 'agreed to by the House of the People' (जिसे लोक-सभा की स्वीकृति प्राप्त हो) शब्दों के स्थान में 'agreed to by a similar resolution of the House of the People' (जिसे लोक-सभा ने इसी प्रकार के संकल्प द्वारा स्वीकृति प्रदान की हो) शब्द रखे जायें।"

मुझे आश्चर्य है कि मसौदा-समिति ने परादिक के इस भाग में इस प्रकार के शब्द रखकर मनोरंजनपूर्ण ढंग से अस्पष्ट होने का क्यों निश्चय किया। इस अनुच्छेद के मसौदे में केवल यह कहा गया है कि इस संकल्प को लोक-सभा की स्वीकृति प्राप्त होनी चाहिये। यह सभी स्वीकार करते हैं कि संक्षिप्त, स्पष्ट

[श्री एच.वी. कामत]

और सारपूर्ण विवरण एक उत्कृष्ट विधान का लक्षण है। किन्तु कोई भी यह नहीं कह सकता कि संक्षिप्त विवरण हमारे विधान की विशेषता है। हम इस पर गर्व करते हैं कि हमारे विधान का आकार संसार के अन्य सभी विधानों से वृहत् है। कुछ लोगों को तो इस पर बहुत ही गर्व है। किन्तु इस विधान के कुछ भागों में मैं यह देखता हूं कि मसौदा-समिति ने संक्षिप्त विवरण के प्रति एक विचित्र प्रेम का परिचय दिया है। किन्तु दुर्भाग्य से इससे स्पष्टता और सुगठन का हनन हो गया है। उदाहरणार्थ, इस स्थान पर यह नहीं बताया गया है कि संकल्प के लिये किस प्रकार के बहुमत की आवश्यकता होगी। परादिक में यह नहीं बताया गया है कि उस पर एकमत होना चाहिये अथवा दो-तिहाई बहुमत अथवा तीन-चौथाई बहुमत अथवा साधारण बहुमत। मैं आशा करता हूं कि डॉ. अम्बेडकर इस ओर कुछ ध्यान देंगे और इसका उत्तर देंगे।

मैं सभा का ध्यान अनुच्छेद 50 की ओर आकृष्ट करता हूं जिसे हमने कल स्वीकार किया है और जो प्रधान पर प्राभियोग लगाने और उसे अपने पद से हटाये जाने के बारे में है। उसमें हमने यह कहा है कि प्रधान पर प्राभियोग लगाने के लिये तथा उसे पद से हटाने के लिये भी सभा में बहुमत की आवश्यकता होगी। यह भी भारतीय गणराज्य के उप-प्रधान को, उसके पद से हटाने के लिये उसी प्रकार का एक अनुच्छेद है। किन्तु यह एक आश्चर्य की बात है कि उसमें यह स्पष्ट रूप से नहीं कहा गया है कि क्या राज्य-परिषद् के सभी सदस्यों के बहुमत से पारित संकल्प से सारी लोक-सभा को सहमत होना चाहिये अथवा उसको उसे साधारण बहुमत से स्वीकार कर लेना चाहिये। यदि इस अनुच्छेद और इसके परादिक को इसी प्रकार छोड़ दिया जाय तो बाद को बहुत कठिनाइयों का सामना करना पड़ेगा। यह हो सकता है कि राज्य-परिषद् संकल्प को केवल साधारण बहुमत से स्वीकार करे। लोक-सभा के संबंध में अनुच्छेद में इस प्रकार का कोई उल्लेख नहीं है कि संकल्प के पारण के लिये किस प्रकार के बहुमत की आवश्यकता होगी। मेरे विचार से यह आवश्यक है कि अनुच्छेद में यह स्पष्ट कर दिया जाये कि राज्य परिषद् के संकल्प को लोक-सभा द्वारा स्वीकृति प्रदान करने के लिये कितने बहुमत की आवश्यकता होगी। यदि यह स्पष्ट नहीं किया गया तो बाद को हम कठिनाई में पड़ सकते हैं।

क्या मैं इस परादिक में एक और दोष बता सकता हूं? कल हमने प्राभियोग लगाने पर प्रधान को पद से हटाने के बारे में अनुच्छेद 50 को स्वीकार किया

था। उसमें हमने इस व्यवस्था को पर्याप्त समझा है कि प्रधान को उसके पद से हटाने के लिये एक सभा दोषारोप का पुरोधान करेगी और दूसरी सभा उस आरोप के परीक्षणार्थ एक संकल्प को स्वीकार करेगी। किन्तु जहां तक उप-प्रधान को पद से हटाने का संबंध है हमने यह व्यवस्था की है कि राज्य-परिषद् द्वारा पारित संकल्प लोक-सभा द्वारा स्वीकार होना चाहिये। कल प्रोफेसर शाह के संशोधन का समर्थन करते हुये मैंने यह तर्क उपस्थित किया था कि संसद् की दोनों सभाओं के संकल्प अथवा मतदान द्वारा, न कि संसद् की किसी एक सभा के मतदान द्वारा, प्रधान को अपने पद से हटाना चाहिये।

उप-प्रधान को हटाने के लिये हमने यह कहा है कि निष्कासन के संकल्प को संसद् की दोनों सभाओं को स्वीकार करना चाहिये किन्तु प्रधान को पद से हटाने के लिये हमने एक ही सभा का संकल्प स्वीकार करना पर्याप्त समझा है। यह एक विचित्र बात है जिसका यह अर्थ है कि हम उप-प्रधान के निष्कासन को प्रधान के निष्कासन से भी अधिक महत्त्व दे रहे हैं।

श्रीमान्, आपकी अनुमति से मैं, प्रोफेसर शाह ने अभी जो संशोधन उपस्थित किया है, उसके संबंध में एक शब्द कहना चाहता हूं। मेरे विचार से मेरे मित्र ने 79वां अनुच्छेद नहीं पढ़ा है जिसमें राज्य-परिषद् के सभापति अर्थात् हमारे विधान के अनुसार भारत के उप-प्रधान के परिलाभ, वेतन और भत्तों की व्यवस्था की गई है। यदि उन्होंने वह अनुच्छेद पढ़ा होता तो वे अपने 1259वें संशोधन के इस प्रश्न से संबंधित भाग को उपस्थित नहीं करते।

उपाध्यक्ष: आगे के संशोधन पर एक संशोधन है जो पण्डित ठाकुरदास भार्गव के नाम से है। मेरे विचार से वे उसे उपस्थित नहीं कर रहे हैं। मुख्य संशोधन भी उपस्थित नहीं किया जा रहा है। क्या मि. मोहम्मद ताहिर यह चाहते हैं कि उनके संशोधन संख्या 1266 पर मत लिया जाये?

***श्री मोहम्मद ताहिर** (बिहार : मुस्लिम): श्रीमान्, चूंकि श्री कामत ने अपने संशोधन संख्या 1264 का केवल एक भाग उपस्थित किया है, इसलिये मुझे आशा है कि आप मुझे अपना संशोधन उपस्थित करने की आज्ञा देंगे।

***उपाध्यक्ष:** यह नहीं हो सकता है। हमने इस प्रकार की एक प्रथा स्थापित की है। मैं यह जानना चाहता हूं कि क्या माननीय सदस्य महोदय चाहते हैं कि मैं उस पर मत लूं अथवा नहीं?

***श्री एच.वी. कामतः** श्रीमान्, वे ठीक कह रहे हैं। चूंकि मैंने अपना पूरा संशोधन, जिसके चार भाग हैं, उपस्थित नहीं किया है; उन्हें अपना संशोधन उपस्थित करने दिया जा सकता है। मैंने अपने संशोधन का केवल तीसरा भाग उपस्थित किया था। उनके संशोधन का संबंध एक दूसरे विषय से है और इसलिये उसे उपस्थित करने में कोई रुकावट नहीं है।

***श्री मोहम्मद ताहिरः** क्या मैं तीनों संशोधनों को अर्थात् संशोधन संख्या 1266, 1267 और 1268 को एक साथ उपस्थित कर सकता हूं?

***उपाध्यक्षः** आप केवल संशोधन संख्या 1266 को उपस्थित कर सकते हैं। संशोधन संख्या 1267 एक दूसरे समूह के अधीन आता है जैसा कि माननीय सदस्यों को भेजी हुई संशोधन-समूहों की सूची में देखा जा सकता है।

***श्री मोहम्मद ताहिरः** मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

"अनुच्छेद 56 के परादिक के खण्ड (ख) में 'all the then members of the Council' (परिषद् के तत्कालीन समस्त सदस्यों) के स्थान में 'the members of the Council present and voting' (परिषद् के उपस्थित तथा मत देने वाले सदस्यों) शब्द रखे जायें।"

श्रीमान्, यदि मेरा संशोधन स्वीकार कर लिया गया तो खण्ड इस प्रकार हो जायेगा:

"The Vice-President may be removed from his office for incapacity or want of confidence by a resolution of the Council of States passed by a majority of the Members of the Council present and voting."

(उपप्रधान, राज्य-परिषद् के ऐसे सकंल्प द्वारा अपने पद से असामर्थ्य अथवा विश्रम्भाभाव के लिये निष्कासित किया जा सकेगा जिसे परिषद् के उपस्थित तथा मत देने वाले सदस्यों के बहुमत ने पारण किया हो।)

श्रीमान्, इस संबंध में मैं यह निवेदन करना चाहता हूं कि वर्तमान प्रावधान में यह कहा गया है कि "राज्य-परिषद् के ऐसे संकल्प द्वारा जिसे परिषद् के तत्कालीन समस्त सदस्यों के बहुमत ने पारण किया हो।" मैं "परिषद् के तत्कालीन समस्त सदस्यों" और "परिषद् के उपस्थित तथा मत देने वाले सदस्यों" में अन्तर करना चाहता हूं। "परिषद् के तत्कालीन समस्त सदस्यों" में

वे सब सदस्य भी सम्मिलित हैं जो यद्यपि परिषद् के सदस्य हों परन्तु परिषद् में उपस्थित न हों; परन्तु स्पष्टत: इसका उद्देश्य यह है कि संकल्प को वे सदस्य उपस्थित करें तथा पारण करें जो उपस्थित हों और मत देते हों। श्रीमान्, डॉ. अम्बेडकर इस ओर ध्यान नहीं दे रहे हैं।

***उपाध्यक्ष:** डॉ. अम्बेडकर, मि. ताहिर चाहते हैं कि आप उनकी ओर ध्यान दें।

***श्री मोहम्मद ताहिर:** मैं यह कह रहा था कि "परिषद् के तत्कालीन समस्त सदस्यों के बहुमत" शब्दों में वे सदस्य भी सम्मिलित हैं जो यद्यपि परिषद् के सदस्य हों परन्तु परिषद् में उपस्थित न हों परन्तु स्पष्टत: इसका उद्देश्य यह है कि संकल्प को वे सदस्य उपस्थित करें तथा पारण करें जो उपस्थित हों और मत देते हों। इसलिये मेरा यह निवेदन है कि "परिषद् के उपस्थित तथा मत देने वाले सदस्यों" शब्द वर्तमान शब्द "परिषद् के तत्कालीन समस्त सदस्यों" से अधिक उपयुक्त होंगे। इन शब्दों के साथ मैं इस प्रस्ताव को उपस्थित करता हूं।

***श्री महबूब अली बेग साहब** (मद्रास : मुस्लिम): उपाध्यक्ष महोदय, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

"अनुच्छेद 56 के परादिक के खण्ड (ख) में 'all the then members of the Council and agreed to by the House of the People' (परिषद् के तत्कालीन समस्त सदस्यों के बहुमत ने पारण किया हो तथा जिसे लोक-सभा की स्वीकृति प्राप्त हो) शब्दों के स्थान में निम्नलिखित रखा जाये:

'not less than two-thirds of the total membership of the Council and agreed to by the House of the people by a majority of not less than two-thirds of its total membership.'"

(परिषद् के कुल सदस्यों में से कम से कम दो-तिहाई सदस्यों के बहुमत ने पारण किया हो तथा जिसे लोक-सभा के कुल सदस्यों में से दो-तिहाई सदस्यों की स्वीकृति प्राप्त हो।)

श्रीमान्, विधान में उप-प्रधान के निर्वाचन की व्यवस्था की गई है। वह प्रधान के बीमार होने के कारण अथवा अन्य किसी कारण से अनुपस्थित होने पर

[श्री महबूब अली बेग साहब]

उसके प्रकार्यों को करेगा। प्रधान के पद रिक्त होने पर भी वह प्रधान के प्रकार्यों को करेगा। इस प्रकार इस पद का पर्याप्त महत्त्व है। यह केवल एक आकस्मिक बात है कि उनसे राज्य-परिषद् का सभापतित्व करने को कहा गया है। वे पद-कारणात् राज्य-परिषद् के सभापति होंगे। इस प्रकार, श्रीमान्, उप-प्रधान के पद को बहुत महत्त्वपूर्ण बना दिया गया है। इस पद के लिये निर्वाचन की जो प्रणाली निश्चित की गई है वह बहुत सरल बना दी गई है, यद्यपि मेरी तो यह इच्छा थी कि इसे उतना ही विस्तृत बनाया जाता जितना प्रधान-पद संबंधी निर्वाचन प्रणाली को बनाया गया है। हमने यह स्वीकार किया है कि दोनों सभाओं के सदस्य ही उनका निर्वाचन कर लेंगे। इतने महत्त्वपूर्ण पदाधिकारी को, जो प्रधान के अत्यन्त महत्त्वपूर्ण प्रकार्यों को करेगा और जिसको प्रधान की वे सभी शक्तियां और विमुक्तियां प्राप्त होंगी जिनका उल्लेख अनुच्छेद 54 के खण्ड (3) में है, क्या केवल राज्य-परिषद् के साधारण बहुमत से और लोक-सभा की स्वीकृति से निर्वाचित कर लेना चाहिये? यह एक विचारणीय प्रश्न है। मेरा यह निवेदन है कि मैं उन सदस्यों से सहमत हूं जिन्होंने इस आशय का एक संशोधन उपस्थित किया था कि असामर्थ्य, देश-द्रोह आदि के लिये उप-प्रधान को भी उसी प्रकार हटाया जाना चाहिये जिस प्रकार प्रधान को! मैं उन संशोधनों का समर्थन करता हूं जिनका आशय यह है कि पद-निष्कासन के संबंध में उनके साथ उसी प्रकार का व्यवहार होना चाहिये जैसा प्रधान के प्रति। किन्तु यदि किसी कारण मसौदा-समिति के सभापति इतना आगे बढ़ने के लिये तैयार नहीं हैं तो उचित यह है कि उप-प्रधान को असामर्थ्य और विश्रम्भाभाव के लिये दोनों सभाओं के दो-तिहाई सदस्यों के बहुमत से अपने पद से हटाना चाहिये। यह कहा जा सकता है कि यदि राज्य-परिषद् को उप-प्रधान पर कोई विश्वास नहीं रह गया हो तो उसे साधारण बहुमत से हटा देना चाहिये क्योंकि जिन शब्दों का प्रयोग किया गया है वे इस प्रकार हैं—"असामर्थ्य और विश्रम्भाभाव के लिये"। किन्तु हम एक बात भूल रहे हैं। वह केवल राज्य-परिषद् का सभापतित्व ही नहीं करेगा बल्कि एक ऐसा व्यक्ति होगा जो प्रधान के अत्यन्त महत्त्वपूर्ण प्रकार्यों को करेगा। मैं इससे सहमत हूं कि यदि राज्य-परिषद् उसे अपना सभापति बनाये रखने के पक्ष में न हो तो निस्संदेह यह कहा जा सकता है कि उसे हटा दिया जाये परन्तु, जैसा कि मैं कह चुका हूं, हम यह भूल रहे हैं कि यदि प्रधान किसी कारण अनुपस्थित हो अथवा उसका स्थान रिक्त हो जाये तो उसे प्रधान की हैसियत से भी काम करना होगा। यह एक बहुत महत्त्वपूर्ण प्रकार्य है और

इसलिये, श्रीमान्, यदि मसौदा-समिति के सभापति उसे उसी प्रकार हटाने के लिये तैयार न हों जैसे प्रधान को, तो उसे कम से कम दोनों सभाओं के दो-तिहाई सदस्यों के बहुमत से हटाना चाहिये। श्रीमान्, मैं इस संशोधन को उपस्थित करता हूं।

***उपाध्यक्ष:** संशोधन संख्या 5 को उपस्थित करने की आज्ञा नहीं दी जाती है क्योंकि वह केवल शाब्दिक है। इसी कारण संशोधन संख्या 1268 को उपस्थित करने की भी आज्ञा नहीं दी जाती है।

अब हम उन चार संशोधनों पर आते हैं जो माननीय सदस्यों को दिये हुये पत्रों में एक ही समूह में रखे गये हैं अर्थात् संशोधन संख्या 1267, 1270, 1271 और 1272। इनमें से संशोधन संख्या 1270 सबसे अधिक विस्तृत है और उसे उपस्थित किया जा सकता है। वह श्री नन्दकिशोर दास और श्री विश्वनाथ दास के नाम से है।

(संशोधन संख्या 1270 उपस्थित नहीं किया गया।)

तब संशोधन संख्या 1267 उपस्थित किया जा सकता है। मि. मोहम्मद ताहिर!

***श्री मोहम्मद ताहिर:** उपाध्यक्ष महोदय, श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव करता हूं कि:

> "अनुच्छेद 56 के परादिक के खण्ड (ख) में 'fourteen days' notice' (सूचना कम से कम चौदह दिन पूर्व) शब्दों के स्थान में 'fourteen days' notice in writing signed by not less than thirty members of the Council of States' (लिखित सूचना राज्य-परिषद् के कम से कम तीस सदस्यों द्वारा अपने हस्ताक्षरों से कम से कम चौदह दिन पूर्व न दे दी गई हो) शब्द रखे जायें।"

मैं इस विषय के संबंध में संक्षेप में कहूंगा चूंकि प्रधान के संबंध में हम यह स्वीकार कर चुके हैं कि इस प्रकार के संकल्प सभा के एक चौथाई सदस्यों के हस्ताक्षर से उपस्थित किये जाने चाहियें। उप-प्रधान के संबंध में भी हम इस प्रकार का प्रावधान क्यों न रखें कि इस प्रकार की सूचना पर राज्य-परिषद् के कम से कम 30 सदस्यों के हस्ताक्षर होने चाहियें और तभी उसे स्वीकार किया जा सकता है। मुझे आशा है कि डॉ. अम्बेडकर इस पर यथोचित विचार करेंगे और इस संशोधन को स्वीकार करने के लिये सहमत होंगे।

(संशोधन संख्या 1271 और 1272 उपस्थित नहीं किये गये।)

उपाध्यक्षः संशोधन संख्या 1273 मि. नजीरुद्दीन अहमद के नाम से है। यह शाब्दिक है और इसलिये इसे उपस्थित करने की आज्ञा नहीं है।

(संशोधन संख्या 1274 उपस्थित किया जा सकता है।)

श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः उपाध्यक्ष महोदय, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

> "अनुच्छेद 56 के परादिक (ग) में 'term' (पदावधि समाप्त हो जाने) शब्दों के बाद 'or resignation or removal as the case may be' (अथवा पदत्याग करने अथवा पद से हटाये जाने पर भी, जैसी भी दशा हो) शब्द प्रविष्ट किये जायें।"

परादिक (ग) में यह व्यवस्था है कि 'पदावधि समाप्त हो जाने पर भी' उप-प्रधान पदारूढ़ रहेगा। मैं यह चाहता हूं कि यह पद इस प्रकार पढ़ा जाय— "पदावधि समाप्त हो जाने अथवा पदत्याग करने अथवा पद से हटाये जाने पर भी, जैसी भी दशा हो।" 'पदावधि समाप्त हो जाने पर' शब्दों से उस अवधि का बोध होता है जब वे पदासीन रहेंगे। इस पद को सम्पूर्ण बनाने के लिये इसके साथ 'पदत्याग अथवा पद से हटाया जाना' शब्द भी सम्मिलित कर देने चाहियें। इसी को स्पष्ट करने के लिये मैंने इस संशोधन का सुझाव रखा है।

***उपाध्यक्षः** इस अनुच्छेद पर अब सामान्य वादानुवाद हो सकता है। पहले श्री सिधवा और उनके बाद मि. तजम्मुल हुसैन बोलेंगे। मैं इन दोनों नामों को एक साथ सुना देता हूं।

***श्री आर.के. सिधवा** (मध्यप्रान्त और बरार : जनरल): उपाध्यक्ष महोदय, मेरे मित्र प्रोफेसर के.टी. शाह ने अपना संशोधन संख्या 1259 उपस्थित करते हुये यह कहा था कि उप-प्रधान के लिये एक सरकारी निवास-गृह की व्यवस्था करनी चाहिये और उसके परिलाभ और भत्ते विधान में निश्चित कर दिये जाने चाहियें। इस सुझाव को उपस्थित करने का उन्होंने यह कारण बताया था कि यदि हम परिलाभ निश्चित नहीं करते हैं और उसके लिये न्यायोचित वेतन तथा निवास-गृह की व्यवस्था नहीं करते हैं तो यह संभव है कि उसे कई प्रकार के दुराचार का प्रलोभन हो। उन्होंने कुछ उदाहरण दिये थे। श्रीमान्, मैं इन प्रश्नों पर अपना मत प्रकट करूंगा।

हम सभी जानते हैं कि उप-प्रधान के पद के संबंध में हमने अनुच्छेद 53 में, जिसे हमने स्वीकार कर लिया है, यह कहा है कि वह पद-कारणात् राज्य-परिषद् का सभापति होगा। इस प्रकार उसका वेतन अवश्य ही निश्चित किया जायेगा। राज्य-परिषद् का सभापति, जिसका पद बहुत ही उत्तरदायित्वपूर्ण होगा, अवश्य ही वेतन पायेगा और वह अनुच्छेद 79 में निश्चित कर दिया गया है। श्रीमान्, अनुच्छेद 79 में यह कहा गया है कि प्रधान, राज्य-परिषद् के सभापति, अध्यक्ष, उपाध्यक्ष सभी के वेतन निश्चित किये जायेंगे। मेरे माननीय मित्र प्रोफेसर के.टी. शाह की यह धारणा है कि यह विधान ही में निश्चित कर दिया जाना चाहिये। श्रीमान्, मेरे विचार से विधान में उप-प्रधान के पद के लिये वेतन निश्चित करना आवश्यक नहीं है। प्रधान और गवर्नरों के वेतन कुछ सुपरिचित कारणों से निश्चित किये गये हैं ताकि समय-समय पर उनके वेतन न बदले जायें। किन्तु चूंकि उप-प्रधान प्रधान के अधीन होगा। इसलिये उसका वेतन सभा के मतानुसार निश्चित किया जाना चाहिये।

प्रोफेसर के.टी. शाह आगे यह कहते हैं कि उसका वेतन प्रधान के वेतन से अधिक न होना चाहिये जैसे उनकी यह धारणा हो कि उप-प्रधान का पद प्रधान के पद से अधिक महत्त्वपूर्ण है और इसलिये हमें उसके लिये प्रधान से भी अधिक वेतन निश्चित करना चाहिये। हम सभी स्वीकार करते हैं कि राज्य-परिषद् के सभापति और उप-प्रधान को वेतन दिया जाना चाहिये और इस प्रकार का एक प्रावधान भी है, परन्तु मैं उनके इस दृष्टिकोण से सहमत नहीं हूं, और मुझे आशा है कि सभा भी इससे सहमत न होगी कि वेतन विधान में निश्चित कर दिया जाना चाहिये।

श्रीमान्, निवास-गृह के संबंध में प्रोफेसर शाह ने कहा है कि आजकल जैसी किराये के नियंत्रण की व्यवस्था है उसे देखते हुये, यदि हम उसे निवास गृह न दें तो यह संभव है कि उसका किसी से कलह हो जाय और उसे कई प्रकार के दुराचार करने का प्रलोभन हो। मैं इस सुझाव को इस कारण स्वीकार नहीं कर सकता हूं। आज हमारी विधान-परिषद् के एक अध्यक्ष हैं। उनके लिये कानून द्वारा किसी निवास-गृह की व्यवस्था नहीं की गई है परन्तु सरकार ने उनके लिये एक मकान प्राप्त किया है। इसी प्रकार राज-मन्त्रियों और उपमन्त्रियों के लिए सरकार ने मकान प्राप्त किये हैं, यद्यपि वे मकान पाने के अधिकारी नहीं हैं। मुझे इसका पता नहीं है कि उनसे कितना किराया लिया जाता है परन्तु साधारणतया सरकारी कर्मचारियों से उनके वेतन का 10 प्रतिशत लिया जाता है। इसलिये श्रीमान्, यह कहना अतिशयोक्ति ही होगी कि यदि हम सरकारी निवास-गृह की व्यवस्था न करें तो अधिकारी को किराये के नियंत्रक के पास जाकर यह कहना

[श्री आर.के. सिधवा]

होगा कि "यदि आप मुझे इस मकान को दे दें तो मैं आपको इतना धन दूंगा"। मेरे विचार से कोई भी उप-प्रधान यह करने के लिये सहमत न होगा और वह भारत के लिये एक दुर्दिन होगा जब कोई उप-प्रधान यह सब करने के लिये तैयार हो जायेगा। इस दृष्टि से, श्रीमान्, मेरे विचार से प्रोफेसर शाह का भय निराधार है।

प्रोफेसर शाह ने भ्रष्टाचार पर बहुत जोर दिया है। उन्होंने यह कहा है कि वे उपप्रधान, सभी मन्त्रियों और कर्मचारियों को यथोचित उच्च वेतन इस कारण देना चाहते हैं कि उन्हें किसी प्रकार के भ्रष्टाचार अथवा घूस आदि का प्रलोभन न हो। यदि हम इस तर्क को स्वीकार करें और किसी व्यक्ति को ईमानदार बनाने के लिये उसे अधिक वेतन दें तो, श्रीमान्, मेरे विचार से यह एक अनर्गल ही बात होगी। एक ईमानदार आदमी आखिर एक ईमानदार आदमी ही है। यदि वह बीस रुपया मासिक भी पाता है तो एक ईमानदार आदमी ईमानदार ही रहेगा। एक बेईमान आदमी यदि वह बीस हजार रुपया मासिक भी पाता है तो वह बेईमान ही रहेगा। मैं यह जानता हूं कि पहले 5,000 रु० पाने वाले कुछ एक्जीक्यूटिव कौंसिलर भी भ्रष्ट पाये गये हैं। मैं यह जानता हूं कि कुछ गवर्नर, जो 10,000 रू. मासिक पाते रहे हैं और कुछ वायसराय, जो 20,000 रु० मासिक पाते रहे हैं, भ्रष्ट पाये गये हैं। इस सभा में और देश में मेरे कई मित्र यह जानते हैं कि कई वायसराय, जो 20,000 रु० मासिक पाते रहे हैं, भ्रष्ट सिद्ध हुये हैं और वे घूस लेते रहे हैं और कुछ गवर्नर भी ऐसा करते रहे हैं। श्रीमान्, मैं उनके नाम नहीं बताना चाहता हूं परन्तु मैं जानता हूं कि यह सभा मुझसे सहमत है। इसलिये यह कहना गलत और तर्कविरुद्ध है और मैं इसे कभी स्वीकार नहीं कर सकता कि आपको किसी व्यक्ति को ईमानदार बनाने के लिये उसे अधिक वेतन देना चाहिये। मैं ऐसे लोगों को जानता हूं जो केवल 15 रु० अथवा 20 रु० मासिक पाते हैं परन्तु ईमानदार हैं यद्यपि वे बहुत यत्न करने पर भी अपने परिवार का भरण-पोषण नहीं कर सकते हैं। यदि कोई व्यक्ति कम वेतन पाता है तो वह अपने घर का खर्च उसी के अनुसार चला लेता है। यदि आप किसी व्यक्ति को अधिक ईमानदार बनाने के लिये ही उसे अधिक वेतन देना चाहते हैं तो मैं इस सुझाव को कभी भी स्वीकार नहीं कर सकता। जहां कहीं इसे स्वीकार किया गया है वहां असफलता ही हुई है। इसलिये मुझे खेद है कि मेरे माननीय मित्र प्रोफेसर

के.टी. शाह ने अपने संशोधन को उपस्थित करते हुये जिस तर्क को उपस्थित किया है उसे मैं स्वीकार नहीं कर सकता हूं, यद्यपि सिद्धान्ततः यह एक प्रशंसनीय प्रस्ताव प्रतीत होता है कि किसी व्यक्ति को ईमानदार बनाने के लिये उसे अधिक वेतन देना चाहिये। मैंने अपने सार्वजनिक जीवन में देखा है कि अधिक वेतन पाने वाले सरकारी कर्मचारी क्या करते रहे हैं। मैं जानता हूं कि वे कितने भ्रष्ट रहे हैं। इन शब्दों के साथ, श्रीमान्, मैं अपने माननीय मित्र प्रोफेसर के.टी. शाह के संशोधन का घोर विरोध करता हूं।

***श्री तजम्मुल हुसैन** (बिहार : मुस्लिम): उपाध्यक्ष महोदय, मैं पहले अपने माननीय मित्र प्रोफेसर के.टी. शाह द्वारा उपस्थित संशोधन संख्या 1259 को उठाऊंगा। उनके संशोधन में यह कहा गया है कि भारतीय गणराज्य के उप-प्रधान के लिये एक सरकारी निवास-गृह होना चाहिये, उप-प्रधान के परिलाभ और भत्ते संसद् द्वारा निश्चित किये जाने चाहियें और जब तक यह न किया जाये उसका वेतन 4,500 रु० होना चाहिये और उसका वेतन उसकी पदावधि में कम न किया जाना चाहिये तथा पांच वर्ष की पदावधि में वह जिस उच्च पद पर आरूढ़ रहा है उसकी प्रतिष्ठा बनाये रखने के लिये उसे अवकाश ग्रहण करने पर उत्तर-वेतन दिया जाना चाहिये। इस संशोधन का समर्थन करने के लिये मैं यहां उपस्थित हुआ हूं। मुझसे पहले बोलने वाले वक्ता महोदय, मेरे माननीय मित्र श्री सिधवा ने कहा है कि जब विधान के 79वें अनुच्छेद में इसका उल्लेख हो चुका है तो फिर उप-प्रधान के वेतन का उल्लेख करने की क्या आवश्यकता है? मैंने तुरंत ही 79वें अनुच्छेद को निकाला और देखा कि उप-प्रधान के वेतन का कहीं भी उल्लेख नहीं है। उत्तर-सभा तथा अवर-सभा, राज्य-परिषद् तथा लोक-सभा के सभापति, उपसभापति, अध्यक्ष तथा उपाध्यक्ष के वेतनों का उल्लेख किया गया है। श्रीमान्, ये दो अलग-अलग बातें हैं कि वह उप-प्रधान भी है और राज्य-परिषद् का सभापति भी है। वह उपाध्यक्ष निर्वाचित होगा और पद-कारणात् राज्य-परिषद् का सभापति होगा। श्रीमान्, इंग्लैण्ड में हम क्या देखते हैं? वहां लार्ड चांसलर होता है, जो लार्ड सभा का सभापति होता है। साथ ही लार्ड चांसलर न्यायाधीश-वर्ग में सर्वोच्च अधिकारी होता है। उसका पद इंग्लैण्ड के लार्ड चीफ जस्टिस के पद से भी ऊंचा होता है। वह लाड्र्स सभा के सभापति की हैसियत से 4,000 पौंड वेतन पाता है और देश के सर्वोच्च न्यायाधीश के नाते 6,000 पौंड पाता है। इस प्रकार उसका कुल वेतन 10,000 पौंड होता है। जब वह अवकाश ग्रहण कर लेता है तो वह 4,000 पौंड उत्तर-वेतन पाता है। श्रीमान्, इतने उच्च पद की प्रतिष्ठा बनाये रखने के लिये उसे यह सब कुछ दिया जाना चाहिये और भारतीय गणराज्य के उप-प्रधान के

[श्री तजम्मुल हुसैन]

विधान में होना चाहिये। इसी कारण मैं इस संशोधन का समर्थन करने के लिए उपस्थित हुआ हूं।

अब मैं अपने माननीय मित्र प्रोफ़ेसर के.टी. शाह द्वारा उपस्थित दूसरे संशोधन को उठाता हूं। मैं इस संशोधन का भी समर्थन करता हूं। इस संशोधन में यह कहा गया है। इसके पहले मैं अनुच्छेद 56 से कुछ शब्द पढ़ूंगा:

> "(ख) उपप्रधान . . . अपने पद से असामर्थ्य अथवा विश्रम्भाभाव के लिये निष्कासित किया जा सकेगा।" वह और किसी कारण से निष्कासित न किया जा सकेगा। मेरे माननीय मित्र प्रोफ़ेसर के.टी. शाह के संशोधन में इसका उल्लेख है कि इन दो बातों के अतिरिक्त कुछ और भी होना चाहिये। उनका संशोधन स्वीकार होने पर खण्ड इस प्रकार हो जायेगा:
>
> "उप-प्रधान . . . अपने पद से यथाविधि प्रमाणित कारण से, अथवा यथाविधि स्थापित विधान के खण्डन के लिये अथवा किसी ऐसे अपराध के कारण दण्डित होने के लिए जिसे प्रधान के, उप-प्रधान के अथवा संसद् के सदस्य के पद के निर्वाचन के लिये अयोग्यता समझा जाता हो, अथवा यथाविधि प्रमाणित शारीरिक अथवा मानसिक अयोग्यता के लिए अथवा यथाविधि सिद्ध घूसखोरी और भ्रष्टाचार के लिये निष्कासित किया जा सकेगा।"

मेरे विचार से, श्रीमान्, इस साधारण विषय के सम्बन्ध में किसी तर्क की आवश्यकता नहीं हं। ये सब बातें बहुत महत्त्वपूर्ण हैं और ये विधान के अनुच्छेद 56 (ख) में प्रविष्ट की जानी चाहियें। इसलिए मैं प्रोफ़ेसर के. टी. शाह के इस संशोधन का समर्थन करता हूं।

अब मैं अपने माननीय मित्र श्री कामत के संशोधन को उठाता हूं। श्रीमान्, मुझे इसका खेद है कि मुझे इसका विरोध करना पड़ रहा है। इस सम्बन्ध में मैं, यह चाहता हूं कि, श्रीमान्, आप अपना निर्णय दें। हम यह देखते हैं। कि हमारे माननीय मित्र श्री कामत ने पांच स्पष्टत: भिन्न संशोधनों को एक ही संशोधन में मिलाकर भेजा है।

श्री एच.वी. कामत: मुझे इसका खेद है कि इस संशोधन को उपस्थित करते समय मैंने जो कुछ कहा उसे मेरे माननीय मित्र मि. तजम्मुल हुसैन नहीं समझे। मैंने यह कहा था कि मैंने इन्हें चार पृथक संशोधनों के रूप में भेजा था।

परन्तु वे संशोधनों की पुस्तक में एक ही संशोधन के रूप में छपे हैं। इसमें मेरा कोई दोष नहीं है। मैंने इन चार संशोधनों में से केवल एक को उपस्थित किया है।

***उपाध्यक्षः** श्री कामत ने अपने संशोधन का केवल तीसरा भाग उपस्थित किया है। उन्होंने अन्य भाग उपस्थित नहीं किये हैं।

श्री तजम्मुल हुसैनः दुर्भाग्य से जब श्री कामत ने अपना संशोधन उपस्थित किया था उस समय मैं सभा में उपस्थित नहीं था। इसलिए मुझे यह ज्ञात न था। कि वास्तव में उन्होंने क्या उपस्थित किया। मैं यह जानना चाहता हूं कि उन्होंने एक ही संशोधन उपस्थित किया है अथवा सभी संशोधन?

***उपाध्यक्षः** केवल तीसरा भाग।

***श्री तजम्मुल हुसैनः** एक ही संशोधन? तब मुझे उसके विरोध में कुछ नहीं कहना है। यदि उन्होंने सभी संशोधन उपस्थित किये होते तो मैं आपसे निर्णय के लिये कहता। यह सम्भव है दफ़्तर की गलती के कारण हुआ होगा। इससे मुझे कोई मतलब नहीं हैं। प्रत्येक संशोधन स्पष्ट तथा पृथक् रूप से उपस्थित किया जाना चाहिये।

अब मैं अपने माननीय मित्र मि. महबूब अली बेग द्वारा उपस्थित संशोधन संख्या 1269 को उठाता हूं। मैं इसका विरोध करता हूं। वे यह कहते हैं कि अनुच्छेद 56 के परादिक के खण्ड (ख) में "परिषद् के तत्कालीन समस्त सदस्यों के बहुमत ने पारण किया हो तथा जिसे लोक-सभा की स्वीकृति प्राप्त हो" शब्दों के स्थान में निम्नलिखित रखा जाये: "परिषद् के कुल सदस्यों में से कम से कम दो-तिहाई सदस्यों ने...." आदि। वे यह चाहते हैं कि जब उप-प्रधान के विरुद्ध दोषारोप का पुरोधान किया जाये तो दो-तिहाई सदस्यों का बहुमत होना चाहिए। श्रीमान्, कल प्रधान के विरुद्ध दोषारोप के प्रस्ताव के सम्बन्ध में मैंने कहा था कि प्रधान बहुसंख्यक दल के हाथों में कठपुतली न होना चाहिए और कम से कम दो-तिहाई सदस्यों का बहुमत होना चाहिए। आज मैं यह कह रहा हूं कि केवल बहुमत ही पर्याप्त होगा। इसका कारण कल मैंने जो बातें कही थीं उनसे भिन्न है। इसका कारण यह है कि वह केवल सभा के अध्यक्ष के रूप में काम करेगा। वह राज्य-परिषद् का सभापति होगा। सभ्य संसार में सब जगह तथा भारत में भी संसद् में तथा प्रान्तीय विधान-मण्डलों में आप देखेंगे कि अध्यक्ष सामान्य

[श्री तजम्मुल हुसैन]

वेतन का उल्लेख बहुमत से हटाया जा सकता है। इसलिये उसके लिये यह आवश्यक है कि उसे लोगों के बहुमत का विश्वास प्राप्त हो। इसलिये मैं इस संशोधन का विरोध करता हूं अन्यथा वह बहुत ही स्वेच्छाचारी हो जायेगा। सभा में एक पक्ष में एक मतदाता भी अधिक होने से उसका बहुमत हो जायेगा और इसलिये उसे सारी सभा की रक्षा करनी होगी। इस कारण मैं इसका विरोध करता हूं।

आगे संशोधन संख्या 1274 आता है जिसे मि. नज़ीरुद्दीन अहमद ने उपस्थित किया था। वे चाहते हैं कि अनुच्छेद 56 के परादिक (ग) में "अथवा पदत्याग करने अथवा पद से हटाये जाने पर भी, जैसी भी दशा हो," शब्द जोड़ दिये जायें। इसे स्वीकार करने से खण्ड इस प्रकार हो जायेगा:

> "उप-प्रधान, अपनी पदावधि समाप्त हो जाने अथवा पदत्याग करने अथवा पद से हटाये जाने पर भी, जैसी भी दशा हो, अपने उत्तराधिकारी के पद-प्रवेशन तक पदारूढ़ रहेगा।"

मैं इसका घोर विरोध करता हूं। इस खण्ड (ग) का अर्थ केवल यह है कि जब उसकी पदावधि समाप्त हो जाये और दूसरा निर्वाचन हो रहा हो तथा उस समय तक उसका उत्तराधिकारी न मिल सका हो तो वह अपने उत्तराधिकारी के यथोचित रूप से प्राप्त होने तक और पदासीन होने तक अपने पद पर आरूढ़ रहेगा। परन्तु यदि उप-प्रधान अथवा राज्य-परिषद् का सभापति घूसखोरी आदि जैसे किसी कारण से निष्कासित किया गया हो तो हम नहीं चाहते कि वह एक मिनट के लिये भी पदारूढ़ रहे। मैं उस सभा में बैठना पसन्द न करूंगा जिसका सभापति घूसखोरी के लिये दोषी ठहराया गया हो। उसे तुरन्त ही अपना स्थान रिक्त कर देना चाहिये। पदत्याग के संबंध में भी वह तभी पदत्याग करेगा जब वह अयोग्य हो जायेगा अथवा पदत्याग करने के लिये बाध्य किया जायेगा। इस दशा में भी हम नहीं चाहते कि वह पदारूढ़ रहे। मैं इससे सहमत हूं कि जब पांच वर्ष के उपरान्त उसकी पदावधि समाप्त हो जाये तो वह अपने उत्तराधिकारी के आने तक पदारूढ़ रहे परन्तु यदि वह हटाया गया है तो उसे तुरन्त ही अपना स्थान छोड़ देना चाहिये। इस कारण मैं मि. नज़ीरुद्दीन अहमद के संशोधन का घोर विरोध करता हूं।

***पण्डित ठाकुरदास भार्गव:** श्रीमान्, उप-प्रधान की दो प्रकार की क्षमतायें होंगी। एक तो वह प्रधान के रूप में भी कार्य कर सकेगा और दूसरे राज्य-परिषद् के अध्यक्ष के रूप में काम करेगा। उसकी प्रधान के रूप में कार्य करने की

क्षमता के संबंध में यह स्पष्ट है कि यदि वह विधान का खण्डन करता है तो वह अनुच्छेद 50 की परिधि के अन्दर लाया जा सकेगा और उस पर प्राभियोग लगा कर उसे प्रधान पद से निष्कासित किया जा सकेगा। जब वह अनुच्छेद 56 के अनुसार राज्य-परिषद् के अध्यक्ष के रूप में काम करेगा और उसे हटाने का प्रश्न उठेगा तो उस पर वही प्रावधान लागू किये जा सकेंगे जो लोक-सभा के अध्यक्ष पर लागू किये जायेंगे। अनुच्छेद 77 (ग) को पढ़ने से यह ज्ञात हो जायेगा कि लोक-सभा के अध्यक्ष और उप-प्रधान के संबंध में एक ही प्रकार की भाषा का प्रयोग किया गया है। उप-प्रधान राज्य-परिषद् के अध्यक्ष-पद को ग्रहण करेगा और मेरे विचार से किसी प्रकार के परिवर्तन की आवश्यकता नहीं है। मैं इस सभा का समय लेने के लिये केवल इसलिये उपस्थित हुआ हूं कि मेरा ध्यान एक विषय की ओर आकृष्ट हुआ है और मैं उस पर जोर देने के लिये चिंतित हूं। वह यह है कि यदि उप-प्रधान पर अनुच्छेद 50 के अधीन प्राभियोग लगाया गया और वह सिद्ध हो गया तो वह अवश्य ही पदच्युत हो जायेगा। इस संबंध में मुझे यह आश्वासन दिया गया है कि स्थिति स्पष्ट है और अनुच्छेद 56 में इसे प्रावहित न करके किसी अन्य प्रकार इसकी व्यवस्था की जायेगी। मैंने एक संशोधन की सूचना दी थी परन्तु मैंने इसी आश्वासन पर उसे उपस्थित नहीं किया कि नियमों में इसकी व्यवस्था की जायेगी। मैं इस विषय पर केवल अधिकारियों का ध्यान इस ओर आकृष्ट करने के लिये बोल रहा हूं कि कोई ऐसी व्यवस्था करना आवश्यक है कि बिना एक प्रस्ताव द्वारा विश्रम्भाभाव प्रकट किये हुये, जैसा कि खण्ड (ख) में प्रावहित है, उप-प्रधान को अनुच्छेद 50 के अधीन प्राभियोग के सिद्ध होने पर निष्कासित किया जा सके। उप-प्रधान पर लगाये हुये प्राभियोग का सिद्ध होना ही उसके निष्कासन के लिये, मेरे विचार से, पर्याप्त है और इसलिये इसे स्पष्ट कर देना चाहिये। मैं केवल इस विषय की ओर संकेत करना चाहता था ताकि यह आश्वासन मिल सके कि नियमों में इसकी व्यवस्था की जायेगी।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** उपाध्यक्ष महोदय, अनुच्छेद 56 के संबंध में जो संशोधन उपस्थित किये गये हैं, उन्हें स्वीकार न कर सकने के लिये मुझे खेद है। किन्तु संशोधनों के प्रस्तावकों ने जो तर्क उपस्थित किये हैं उनमें से कुछ का मैं उत्तर देना चाहता हूं। श्रीमान्, पहला संशोधन प्रोफेसर शाह ने उपस्थित किया था जिसमें यह कहा गया था कि उप-प्रधान के वेतन और उत्तर-वेतन के संबंध में विधान में कोई प्रावधान होना चाहिये। प्रोफेसर शाह ने इस प्रश्न को प्रधान पद के संबंध में भी उठाया था और मैं विधान में इस प्रकार के प्रावधान को रखने के विरुद्ध अपना तर्क उपस्थित कर चुका हूं।

***माननीय श्री के. सन्तानम्** (मद्रास : जनरल): क्या मैं यह बता सकता हूं कि द्वितीय अनुसूची में एक स्पष्ट प्रावधान रख दिया गया है?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** इस संबंध में मैं अपनी स्थिति स्पष्ट कर चुका हूं और जो कुछ मैं कह चुका हूं उसे मैं नहीं दुहराऊंगा। अनुच्छेद 56 के उपखण्ड (ख) के संबंध में कई बातें कही गई हैं। पहली बात यह कही गई है कि "घूसखोरी, भ्रष्टाचार आदि" शब्दों को जोड़ देना चाहिये। मेरा तो यह विचार है कि इस प्रकार के विशिष्ट शब्दों की आवश्यकता नहीं है। विश्रम्भाभाव का आशय बहुत वृहत् है और उसमें भ्रष्टाचार, घूसखोरी आदि आ जाते हैं। इसलिये मेरे विचार से वह संशोधन अनावश्यक है। दूसरी बात यह कही गई है कि उप-प्रधान का निष्कासन उन्हीं नियमों के अनुसार होना चाहिये जिन नियमों के अनुसार प्रधान का निष्कासन होगा अर्थात् इसके लिये दो-तिहाई सदस्यों का बहुमत होना चाहिये। श्रीमान्, इस संबंध में मैं सभा का ध्यान इस ओर आकृष्ट करना चाहता हूं कि यद्यपि विधान में उप-प्रधान का उल्लेख है परन्तु वह वास्तव में राज्य-परिषद् का सभापति है। दूसरे शब्दों में, जहां तक उसके प्रकार्यों का संबंध है, वह लोक-सभा के अध्यक्ष के समान ही समझा जायेगा। इसलिये अनुच्छेद 56 के उपखण्ड (ख) के प्रावधानों की तुलना करने अथवा उन पर आलोचना करते समय उन्हें अध्यक्ष के निष्कासन संबंधी प्रावधानों से मिला लेना चाहिये। ये प्रावधान अनुच्छेद 77 (ग) में है। यदि इस अनुच्छेद 56 (ख) की तुलना अनुच्छेद 77 (ग) से की जाये तो सदस्य महोदय देखेंगे कि स्थिति एकसमान है। जिन नियमों के अनुसार अध्यक्ष का निष्कासन होगा उन्हीं नियमों के अनुसार उप-प्रधान का भी निष्कासन होगा। मैं यह कह चुका हूं कि यह वास्तव में राज्य-परिषद् के सभापति का ही दूसरा नाम है। इसलिये दो-तिहाई सदस्यों के बहुमत की मांग अनावश्यक है।

इसके अतिरिक्त मेरे मित्र श्री कामत ने एक प्रश्न उठाया है जो कुछ हद तक चुलबुलाहट पैदा करने वाला प्रश्न है। उन्होंने यह कहा है कि इस अनुच्छेद के उपखण्ड (ख) में बहुमत का उल्लेख है किन्तु लोक-सभा के संबंध में इस प्रकार की शब्दावली का प्रयोग नहीं किया गया है। यह विषय बहुत सरल है। जहां कहीं हमने यह कहा है कि कोई संकल्प पारित होना चाहिये तो यह समझा जाता है कि वह सभा के बहुमत से पारित होगा। जब विशेष प्रकार के बहुमत का उल्लेख करना होता है तभी उसका विशेष रूप से उल्लेख किया जाता है,

अन्यथा नहीं। मैं यह स्वीकार करता हूं कि उनका तर्क यह है कि यद्यपि हमने राज्य-परिषद् के संबंध में किसी विशेष बहुमत का उल्लेख नहीं किया है किन्तु हमने इस शब्दावली का प्रयोग किया है। इस प्रकार का विभेद क्यों किया गया है? राज्य-परिषद् के संबंध में और लोक सभा के संबंध में जो शब्द प्रयोग किये गये हैं उनमें अन्तर क्यों रखा गया है? यह अन्तर इसलिये रखा गया है कि अनुच्छेद में 'तत्कालीन' शब्द प्रयुक्त हुआ है। 'तत्कालीन' शब्द महत्त्वपूर्ण है। 'तत्कालीन' शब्द का संकेत उन सदस्यों की ओर है जिनके स्थान रिक्त न हो गये हों। उसका अर्थ उन सदस्यों से नहीं है जो उपस्थित हों और मत दे रहे हों। इस व्यवस्था के कारण कि संसद् के सभी ऐसे सदस्यों के मतों की गणना करनी होगी जिनके स्थान रिक्त न हो गये हों, हमने यह कहा है कि "तत्कालीन समस्त सदस्यों के बहुमत ने पारण किया हो"।

***श्री एच.वी. कामतः** क्या इसका अर्थ राज्य-परिषद् के समस्त सदस्यों से है?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः जी हां। 'तत्कालीन' शब्द आवश्यक है।

***श्री एच.वी. कामतः** श्रीमान्, स्पष्टीकरण के उद्देश्य से मैंने एक बात पूछनी है। कल हमने अनुच्छेद 50 में दो-तिहाई सदस्यों के बहुमत के स्थान में "बहुमत द्वारा पारित" शब्द रखे हैं। अर्थ स्पष्ट करने के लिये क्या हम यहां भी ऐसे ही शब्द नहीं रख सकते हैं?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** मैं इसे स्पष्ट कर देता हूं। इसका कारण यह है कि हमें 'तत्कालीन' शब्द प्रयोग करना पड़ा है। वह इसलिए प्रयोग किया गया है कि हमें उपस्थित तथा मत देने वाले सदस्यों तथा उन सदस्यों में अन्तर करना है जिनके स्थान रिक्त न हुए हों और जो मत देने वाले हों।

***श्री एच.वी. कामतः** क्या मैं यह समझूं कि जब तक इस संबंध में स्पष्टीकरण न किया हुआ हो, संकल्प के पारण होने अथवा स्वीकार होने का यह अर्थ होगा कि वह सामान्य बहुमत से स्वीकार हुआ है?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** जी हां। अब मैं अपने मित्र मि. ताहिर के प्रश्न को अर्थात् संशोधन संख्या 1266 को उठाता हूं। यदि मैं उनको ठीक समझ पाया हूं तो उनका यह कहना है कि विश्रम्भाभाव के संकल्प के लिये दो-तिहाई सदस्यों के बहुमत की आवश्यकता होगी। यह अच्छा होगा या बुरा मैं कह नहीं सकता। मैं केवल यह कह सकता हूं कि यह प्रावधान भी उन्हीं

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

प्रावधानों के समान है जो अध्यक्ष के प्रति विश्रम्भाभाव के संबंध में हैं। उनमें भी हमने यह नहीं कहा है कि दो-तिहाई सदस्यों के अथवा सभा में उपस्थित दो-तिहाई सदस्यों के बहुमत से संकल्प का पारण होगा।

अब मैं अपने मित्र मि. नज़ीरुद्दीन अहमद का संशोधन उठाता हूं। वे यह चाहते हैं कि खण्ड (ग) में "पदावधि समाप्त हो जाने" शब्दों के बाद "पदत्याग" आदि शब्द प्रविष्ट किये जायें। यह संशोधन बिल्कुल अनावश्यक है क्योंकि इस अनुच्छेद में आकस्मिक रूप से रिक्त हुये स्थान की पूर्ति के लिये कोई व्यवस्था नहीं है। आकस्मिक रूप से रिक्त हुये स्थान के लिये कोई अन्य व्यवस्था करने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि जब कभी इस प्रकार स्थान रिक्त होगा तो अनुच्छेद 75 के उपखण्ड (1) के अधीन उपसभापति उसे ग्रहण कर लेगा। इसलिये इस प्रकार का संशोधन अनावश्यक है।

श्रीमान्, मुझे आशा है कि इस स्पष्टीकरण के उपरान्त सभा इस अनुच्छेद को इसके मौलिक रूप में स्वीकार कर लेगी।

***उपाध्यक्ष:** अब मैं संशोधनों पर एक-एक करके मत लूंगा

प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 56 की गणना अनुच्छेद के खण्ड (1) के रूप में की जाये और उसके बाद निम्नलिखित नये खण्ड जोड़ दिये जायें:

'(2) The Vice-President shall have an official residence and there shall be paid to the Vice-President such emoluments and allowances, not exceeding those granted to the President as may be determind by Parliament by law, and until provision in that behalf is made by Act of Parliament, the Vice-President shall be paid a monthly salary of Rs. 4,500.

(3) The emoluments and allowances of the Vice-President shall not be diminished during his term of office.

(4) Every Vice-President, on completion of his term of office and retirement, shall be given such pension

or allowance during the rest of his life as Parliament may by law determine, provided that, during the lifetime of any such Vice-President in retirement and pensioned, such pension or allowance shall not be diminished.' "

[(2) उप-प्रधान का एक सरकारी निवास-गृह होगा और उसे ऐसे परिलाभ और भत्ते दिये जायेंगे जो प्रधान को दिये जाने वाले परिलाभ और भत्तों से अधिक न होंगे और जिन्हें संसद् कानून द्वारा निश्चित करेगी और जब तक संसद् के कानून द्वारा व्यवस्था न की जाये उप-प्रधान को 4,500 रु० का मासिक वेतन दिया जायेगा।

(3) उप-प्रधान के परिलाभ तथा भत्ते उसकी पदावधि में कम नहीं किये जायेंगे।

(4) प्रत्येक उप-प्रधान की उसकी पदावधि समाप्त होने पर तथा उसके अवकाश ग्रहण करने पर उसके अवशेष जीवन-काल में ऐसा उत्तर-वेतन तथा भत्ता दिया जायेगा, जिसे संसद् कानून द्वारा निश्चित करे, परन्तु किसी ऐसे अवकाश ग्रहण किये हुये और उत्तर-वेतन पाने वाले उप-प्रधान के जीवन-काल में यह उत्तर-वेतन अथवा भत्ता कम नहीं किया जायेगा।]

संशोधन गिर गया।

***उपाध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 56 के परादिक के पैरा (ख) में 'be removed from his office for' (हिन्दी में—अपने पद से) शब्दों के बाद निम्नलिखित रखा जाये:

'reason duly proved, or for any violation of the Constitution duly established, or for conviction for any offence constituting a disqualification for election to the office of a President, Vice-President or member of Parliament, or for physical or mental incapacity duly certified, or for bribery and corruption, duly proved.' "

(यथाविधि प्रमाणित कारण से अथवा यथाविधि स्थापित विधान के खण्डन के लिये, अथवा किसी ऐसे अपराध के कारण दण्डित होने के कारण

[उपाध्यक्ष]

जिसे प्रधान के, उप-प्रधान के अथवा संसद् के सदस्य के पद से निर्वाचन के लिये अयोग्यता समझा जाता हो, अथवा यथाविधि प्रमाणित शारीरिक अथवा मानसिक अयोग्यता के लिये अथवा यथाविधि सिद्ध घूसखोरी और भ्रष्टाचार के लिये।)

संशोधन गिर गया।

***उपाध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 56 के परादिक के खण्ड (ख) में 'agreed to by the House of the People' (जिसे लोक-सभा की स्वीकृति प्राप्त हो) शब्दों के स्थान में 'agreed to by a similar resolution of the House of the People' (जिसे लोक-सभा ने इसी प्रकार के संकल्प द्वारा स्वीकृति प्रदान की हो) शब्द रखे जायें।"

संशोधन गिर गया।

***उपाध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 56 के परादिक के खण्ड (ख) में 'all the then members of the Council' (परिषद् के तत्कालीन समस्त सदस्यों) शब्दों के स्थान में 'the members of the Council present and voting' (परिषद् के उपस्थित तथा मत देने वाले सदस्यों) शब्द रखे जायें।"

संशोधन गिर गया।

***उपाध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 56 के परादिक के खण्ड (ख) में 'all the then members of the Council and agreed to by the House of the People' (परिषद् के तत्कालीन समस्त सदस्यों के बहुमत ने पारण किया हो तथा जिसे लोक-सभा की स्वीकृति प्राप्त हो) शब्दों के स्थान में निम्नलिखित रखा जाये:

'not less than two-thirds of the total membership of the Council and agreed to by the House of the People by a majority of not less than two-thirds of the total membership.'"

(परिषद् के कुल सदस्यों में से कम से कम दो-तिहाई सदस्यों के बहुमत ने पारण किया हो तथा जिसे लोक-सभा के कुल सदस्यों में से दो-तिहाई सदस्यों की स्वीकृति प्राप्त हो।)"

संशोधन गिर गया।

***उपाध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 56 के परादिक के खण्ड (ख) में 'fourteen days' notice' (सूचना कम से कम चौदह दिन पूर्व) शब्दों के स्थान में 'fourteen days' notice in writing signed by not less than thirty members of the Council of States' (लिखित सूचना राज्य-परिषद् के कम से कम तीस सदस्यों द्वारा अपने हस्ताक्षरों से कम से कम चौदह दिन पूर्व दे दी गई हो) शब्द रखे जायें।"

संशोधन गिर गया।

***उपाध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 56 के परादिक (ग) में 'term' (पदावधि समाप्त हो जाने) शब्दों के बाद 'or resignation or removal, as the case may be' (अथवा पदत्याग करने अथवा पद से हटाये जाने पर भी, जैसी भी दशा हो) शब्द प्रविष्ट किये जायें।"

संशोधन गिर गया।

***उपाध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 56 विधान का अंग बना लिया जाये।"

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

अनुच्छेद 56 विधान का अंग बना लिया गया।

अनुच्छेद 57

***उपाध्यक्ष:** अब हम अनुच्छेद 57 पर आते हैं।

सभा के सम्मुख यह प्रस्ताव है कि अनुच्छेद 57 विधान का अंग बना लिया जाये।

अभी तक केवल दो संशोधनों की सूचना मिली है अर्थात् संशोधन संख्या 1275 और 1276। मि. नज़ीरुद्दीन अहमद के संशोधन संख्या 1275 को उपस्थित करने की आज्ञा नहीं दी जाती क्योंकि इसका प्रभाव यह होगा कि प्रावधान का ही शून्यन हो जायेगा।

[उपाध्यक्ष]

संशोधन संख्या 1276, जो प्रोफेसर के.टी. शाह के नाम से है, उपस्थित किया जा सकता है।

***प्रोफेसर के.टी. शाहः** उपाध्यक्ष महोदय, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

"अनुच्छेद 57 में 'the functions of the President' (प्रधान के) शब्दों के बाद 'or Vice-President' (अथवा उप-प्रधान के) शब्द रखे जायें।"

संशोधित रूप में अनुच्छेद इस प्रकार हो जायेगा:

"Parliament may make such provision as it thinks fit for the discharge of the functions of the President or Vice-President in any contingency not provided for in this Chapter."

(इस अध्याय में अप्रावहित किसी संभाव्यता में प्रधान के अथवा उप-प्रधान के प्रकार्य पालनार्थ संसद् जैसा उचित समझे वैसा प्रावधान बना सकेगी।)

श्रीमान्, मेरी समझ में नहीं आता है कि प्रधान के प्रकार्य-संबंधी प्रावधान को निश्चित करते समय जब किसी भी संभाव्यता की व्यवस्था की गई है तो उप-प्रधान का उल्लेख क्यों नहीं किया गया है। ऐसी संभाव्यता भी उपस्थित हो सकती है जब प्रधान किसी कारण से, जिनमें सभा का अविश्वास और प्राभियोग का सिद्ध होना भी सम्मिलित है, अपने प्रकार्यों का पालन न कर सकता हो और उप-प्रधान विक्षिप्त हो गया हो। ऐसी संभाव्यता बिल्कुल असंभव नहीं है और इसलिये मेरी समझ में नहीं आता कि ऐसी साधारण संभाव्यता मसौदाकारों के ध्यान में क्यों नहीं आई है। मसौदाकार महोदय कई स्थानों में अपने ही मसौदे में अपने ही संशोधन उपस्थित करते रहे हैं और इसकी चिन्ता करते रहे हैं कि अन्य लोग भी उनका समर्थन करें और अन्य लोगों के संशोधनों से जब उन्हें इसका संकेत मिलता है कि पहले मसौदे में कुछ बातें रह गई हैं तो वे अपने संशोधनों को उपस्थित करते हैं जिनको एक व्यक्ति के अतिरिक्त सारी सभा का समर्थन प्राप्त होता है। परन्तु इस विषय के संबंध में मेरी मसौदाकार महोदय को नेक सलाह यही है कि वे यह न कहें कि यह संशोधन अनावश्यक है।

मैंने अभी एक विशेष प्रकार की सम्भाव्यता की ओर संकेत किया था और यह कहा था कि जब ये दोनों उच्च पदाधिकारी अपने प्रकार्यों का पालन न कर सकें अथवा विधान के अधीन उन्हें उनका पालन करने की आज्ञा न हो तो ऐसी सम्भाव्यता के लिये यह आवश्यक है कि कोई इस प्रकार का प्रावधान रखा जाये:

चूंकि यह विधान का एक अनुच्छेद है इसलिये मैं यह समझता हूं कि इसकी आज्ञा न होनी चाहिये कि किसी सम्भाव्यता के उपस्थित होने पर जो कमी रह जायेगी उसे साधारण कानून द्वारा पूरा किया जायेगा। आप यह कह सकते हैं कि आखिर संसद् तो होगी ही और वह इस प्रकार की सम्भाव्यता के लिये आवश्यक व्यवस्था कर लेगी। परन्तु जब विधान में स्पष्ट रूप से एक प्रावधान रखा गया है और संभवत: जानबूझ कर उसमें 'उप-प्रधान' शब्द को स्थान नहीं दिया गया है तो मेरा सभा से यह निवेदन है कि यह बात रह गई है और इस समय हमें इस गलती को दूर कर देना चाहिये। इसलिये अधिक तर्क उपस्थित न करके मैं यह सुझाव रखता हूं कि कम से कम यह संशोधन स्वीकार कर लिया जाना चाहिये। इससे किसी प्रकार का आक्षेप नहीं होता है और न इससे मसौदाकार की योग्यता, सूझ तथा दूरदर्शिता की ही आलोचना होती है। इसलिये मुझे विश्वास है कि मसौदाकार इसे स्वीकार करने के लिये सहमत होंगे।

***श्री तजम्मुल हुसैन:** उपाध्यक्ष महोदय, मेरे मित्र प्रोफेसर के.टी. शाह ने जो संशोधन उपस्थित किया है उसका मैं विरोध करना चाहता हूं। इसके दो कारण हैं। पहला कारण यह है कि अनुच्छेद 57 में यह कहा गया है कि "इस अध्याय में अप्रावहित किसी सम्भाव्यता में प्रधान के प्रकार्य पालनार्थ संसद्, जैसा उचित समझे, वैसा प्रावधान बना सकेगी।" मेरे मित्र प्रोफेसर शाह इसमें "अथवा उप-प्रधान" शब्दों को प्रविष्ट करना चाहते हैं। यदि उनका संशोधन स्वीकार कर लिया गया तो संसद् को प्रधान के लिये अथवा उप-प्रधान के लिये व्यवस्था करने की शक्ति होगी। वह दोनों के लिये व्यवस्था नहीं कर सकती है। यदि थोड़ी देर के लिये मान लिया जाये कि वह केवल उप-प्रधान के लिये व्यवस्था करती है और प्रधान के लिये कोई व्यवस्था नहीं करती है तो कैसी दशा उत्पन्न हो जायेगी? इसलिये "अथवा" शब्द बिल्कुल गलत है। संसद् यह कह सकती है कि वह केवल उप-प्रधान के लिये व्यवस्था करती है और प्रधान के लिये अपने प्रकार्यों का पालन करने के लिये कोई व्यवस्था नहीं करती है।

दूसरी आपत्ति यह है कि यदि "अथवा" शब्द को हटा दिया जाये और उसके स्थान में "और" शब्द को रखा जाये, और यदि प्रोफेसर शाह का आशय

[श्री तजम्मुल हुसैन]

भी यही है, तो मेरा यह निवेदन है कि उप-प्रधान के रूप में उप-प्रधान को किसी भी प्रकार के प्रकार्यों का पालन नहीं करना है। इसलिये उसके प्रकार्यों के पालन के संबंध में संसद् अथवा कोई भी व्यक्ति क्या व्यवस्था कर सकता है? वह केवल राज्य-परिषद् के सभापति के रूप में काम करेगा। इसलिये मैं इस संशोधन का विरोध करता हूं और इसका कारण यह है कि उसे किसी प्रकार के प्रकार्यों अथवा कर्त्तव्यों का पालन नहीं करना है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** मेरे विचार से इस संशोधन को उपस्थित करने के पूर्व प्रोफेसर के.टी. शाह ने इस पर उतना विचार नहीं किया जितना उन्हें करना चाहिये था। अनुच्छेद 57 में उप-प्रधान का जानबूझ कर उल्लेख नहीं किया गया है क्योंकि, जैसा कि मि. तजम्मुल हुसैन अभी बता चुके हैं, उसके मुख्य प्रकार्य राज्य-परिषद् के सभापति के हैं और वे अनुच्छेद 75 (1) में पर्याप्त रूप से प्रावहित हैं और उसमें इसका भी उल्लेख है कि एक उप-सभापति भी होगा जो उनकी अनुपस्थिति में कार्य करेगा। इसलिये अनुच्छेद 57 में इस प्रकार के संशोधन को प्रविष्ट करना आवश्यक है।

मेरे मित्र प्रोफेसर शाह ने कहा है कि जब कभी मैं देखता हूं कि मसौदे में कोई दोष है तो मैं बहुत से विचार अपने मित्रों के संशोधनों से ले लेता हूं। मेरे विचार से प्रोफेसर के.टी. शाह ने एक प्रकार से अप्रत्यक्ष रूप से मेरी प्रशंसा ही की है क्योंकि इमर्सन ने कहा है कि "प्रतिभाशाली व्यक्ति सबसे अधिक आभारी व्यक्ति है।" मैं अवश्य ही अपने मित्रों का आभारी हूं।

***उपाध्यक्ष:** अब मैं संशोधनों पर मत लूंगा। प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 57 में 'the functions of the President' (प्रधान के) शब्दों के बाद 'or Vice-President' (अथवा उप-प्रधान के) शब्द रखे जायें।"

संशोधन गिर गया।

***उपाध्यक्ष:** और कोई संशोधन नहीं है। प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 57 विधान का अंग बना लिया जाये।"

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

अनुच्छेद 57 विधान का अंग बना लिया गया।

अनुच्छेद 58

***उपाध्यक्ष:** अब हम आगे के अनुच्छेद को, अर्थात् अनुच्छेद 58 को, उठाते हैं।

प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 58 विधान का अंग बना लिया जाये।"

मेरे सामने कई संशोधन हैं जिनमें से केवल संशोधन संख्या 1281 को उपस्थित करने की आज्ञा दी जाती है। अन्य संशोधन शाब्दिक हैं और इसलिए उन्हें उपस्थित करने की आज्ञा नहीं दी जाती।

(संशोधन संख्या 1281 उपस्थित नहीं किया गया।)

***उपाध्यक्ष:** अब मैं इस अनुच्छेद पर मत लूंगा।

प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 58 विधान का अंग बना लिया जाये।"

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

अनुच्छेद 58 विधान का अंग बना लिया गया।

अनुच्छेद 59

***उपाध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 59 विधान का अंग बना लिया जाये।"

मेरे सामने कई संशोधन हैं। संशोधन संख्या 1282 को उपस्थित करने की आज्ञा नहीं दी जाती क्योंकि इसके प्रभाव से अनुच्छेद का ही शून्यन हो जायेगा। संशोधन संख्या 1282-ए उपस्थित किया जा सकता है।

(संशोधन संख्या 1282-ए उपस्थित नहीं किया गया।)

संशोधन संख्या 1283 और 1284 । इन पर भी कई संशोधनों की सूचना मिली है परन्तु उन्हें उपस्थित करने की आज्ञा नहीं दी जाती क्योंकि वे शाब्दिक हैं। संशोधन संख्या 1285 उपस्थित किया जा सकता है।

(संशोधन संख्या 1285 उपस्थित नहीं किया गया।)

संशोधन संख्या 1286 ।

***श्री तजम्मुल हुसैन:** उपाध्यक्ष महोदय, मैं यह प्रस्ताव करता हूं कि:

"अनुच्छेद 59 का खण्ड (3) निकाल दिया जाये।"

श्रीमान्, मेरे विचार से केवल प्रधान को ही मृत्यु-दण्ड के स्थगन, परिहरण अथवा लघ्वादेशन की शक्ति प्राप्त होनी चाहियें। वह राज्य का सर्वोच्च प्रमुख है। इसलिये उसे सर्वोच्च शक्तियां भी प्राप्त होनी चाहियें। मेरी यह सम्मति है कि राज्यों के नरेशों को अथवा प्रान्तीय गवर्नरों को यह सर्वोच्च शक्ति नहीं प्राप्त होनी चाहिये। संघानीय विषयों के विरुद्ध किये हुये अपराधों के संबंध में संघान का प्रधान ही सर्वोच्च प्राधिकारी समझा जाना चाहिये। मेरा यह कहना है कि इस संबंध में कई लोगों के प्रति वफ़ादारी न होनी चाहिये। जब राज्य संघान में सम्मिलित हुये थे तो उन्होंने अपने यहां संघानीय कानूनों के प्रवर्तन को स्वीकार किया था और इस सीमा तक इसे भी स्वीकार किया था कि संघानीय सरकार का पद सर्वोच्च है और संघानीय सरकार के प्रतिनिधि संघान के प्रधान को ही ऐसा प्राधिकारी समझा जा सकता है जो क्षमण प्रदान कर सकता है। संयुक्त राज्य अमेरिका में प्रधान ही राज्यों के लोगों को क्षमण प्रदान करता है। केन्द्र का अस्तित्व बनाये रखने के लिये ये बहुत ही महत्त्वपूर्ण विषय है और इसलिये क्षमण की शक्ति केवल संघानीय सरकार के प्रभुत्व अर्थात् भारतीय संघ अथवा भारतीय गणराज्य के प्रधान को ही दी जा सकती है। यदि राज्यों के नरेशों को उन विषयों के विरुद्ध अपराधों के संबंध में भी शक्ति प्राप्त हो जिनको उन्होंने स्वयं संघान को समर्पित कर दिया है तो इसका अर्थ यह होगा कि उन्होंने एक हाथ से जो कुछ दिया है उसे वे दूसरे हाथ से वापस ले रहे हैं, उन विषयों के संबंध में राज्यों का सर्वोच्च अधिकार नहीं रह जाता जिन्हें उन्होंने संघ को समर्पित कर दिया है। संघानीय कानून प्रत्येक नागरिक पर लागू होगा और उसका संघानीय सरकार से अव्यवहित संबंध होगा। संघानीय कानून के भंग होने की दशा में संघान के प्रतिनिधि को ही क्षमण की शक्ति प्राप्त होनी चाहिये। मैं अमेरिका की ओर संकेत कर चुका हूं। इंग्लैण्ड में भी सम्राट् ही, गृह-मन्त्री के परामर्श से, क्षमण प्रदान करता है। राज्य का प्रतिनिधि ही क्षमण प्रदान करता है। पिछले दिनों में, जब देश-विभाजन की कोई चर्चा नहीं थी, यह विचार किया जा रहा था कि केन्द्र अशक्त हो और उसके अधिकार में यातायात, रक्षा, वैदेशिक संबंध जैसे तीन या चार विषय हों और प्रान्त पूर्णतया स्वायत्तशासी हों। अब चूंकि देश का विभाजन हो गया है, इस देश के निवासी, हम लोगों ने अन्तिम रूप से यह निश्चय कर लिया है कि केन्द्र अशक्त न होगा, बल्कि सशक्त होगा, और यथासंभव शक्तिसंपन्न होगा। यदि यही हमारा उद्देश्य है तो केन्द्रीय सरकार के

प्रमुख को यह शक्ति प्राप्त होनी चाहिये। इन शब्दों के साथ, श्रीमान्, मैं अपने संशोधन को उपस्थित करता हूं और आशा करता हूं कि इसे पूर्ण सभा का तथा मेरे माननीय मित्र डॉ. अम्बेडकर और आपका भी समर्थन प्राप्त होगा।

***उपाध्यक्ष:** संशोधन संख्या 1287 को उपस्थित करने की आज्ञा नहीं दी जाती, क्योंकि वह रस्मी है।

(संशोधन संख्या 1288 उपस्थित नहीं किया गया।)

***श्री आर.के. सिधवा:** श्रीमान्, मेरे माननीय मित्र मि. तजम्मुल हुसैन का प्रस्ताव यह है कि अनुच्छेद 59 के खण्ड (3) को निकाल दिया जाये और इसके लिये उन्होंने यह तर्क उपस्थित किया है कि प्रधान का प्राधिकार सर्वोच्च रहना चाहिये। उनकी यह इच्छा है। इसे कोई अस्वीकार नहीं करता। यदि माननीय सदस्य अनुच्छेद 59 (1) को पढ़ें तो वे देखेंगे कि उसमें कहा गया है कि:

> "किसी अपराध के लिये दोषप्रमाणित किसी व्यक्ति के दण्ड के क्षमण, प्रविलम्बन, प्रास्थगन या परिहरण प्रदान करने की अथवा दण्डादेश का स्थगन, परिहरण या लघ्वादेशन करने की प्रधान को शक्ति होगी...."

इसी प्रकार की शक्तियां गवर्नरों को भी दी गई हैं और वे भी मृत्यु-दण्ड का स्थगन, परिहरण अथवा लघ्वादेशन कर सकते हैं। मेरी सम्मति में यदि प्रान्तीय गवर्नरों को पहले की तरह यह शक्ति दी जाये तो इससे बहुत लाभ होगा क्योंकि क्षमण-संबंधी किसी मामले से, जो उसके सम्मुख रखा जाये, प्रान्त का गवर्नर अधिक परिचित होता है। जहां तक प्रधान का संबंध है, जब इस प्रकार का प्रश्न उसके सामने उपस्थित किया जाता है, उसे पहले गवर्नर से पूछताछ करनी होती है और जब वह देखता है कि गवर्नर ने अपने अधिकार का यथोचित रूप से प्रयोग नहीं किया है तो वह सारे मामले की जांच करता है और फिर अपने अधिकार का प्रयोग करता है। यह उचित ही है कि दण्ड के लघ्वादेशन के संबंध में गवर्नर को भी शक्ति प्राप्त होनी चाहिये और सर्वोच्च शक्ति प्रधान को ही प्राप्त होनी चाहिये। गवर्नर लोकप्रिय गवर्नर होगा और एक प्रकार से वह विधान-मण्डल के प्रति उत्तरदायी होगा क्योंकि प्रधान-मन्त्री उसे मनोनीत करेगा। यदि वह गलती करेगा, जैसा कि मेरे मित्र को भय है, तो विधान-मण्डल उस पर देख-रेख रख सकता है। इसलिये मेरी यह धारणा है कि विधान के मसौदे में जैसी स्थिति रखी गई है वह बहुत ही संतोषजनक है और हमें चाहिये कि हम उसकी इन शक्तियों को बनाये रखें।

[श्री आर.के. सिधवा]

जहां तक नरेशों का संबंध है, मेरी धारणा स्पष्ट नहीं है। परन्तु मुझे विश्वास है कि राज्यों के विभिन्न विधान-परिषद् जिन विधानों को बनाने जा रहे हैं उनमें वे नरेशों को विधान-मण्डलों के प्रति उत्तरदायी बनायेंगे और उसको भी प्रान्तों के प्रमुखों के समान राज्यों के केवल नाममात्र के प्रमुख बनायेंगे। इस दृष्टि से मैं नरेशों को भी शक्ति देने के पक्ष में हूं, यद्यपि मैं यह कहता हूं कि इस समय मुझे ठीक-ठीक ज्ञात नहीं है कि नरेशों की स्थिति क्या है। यदि नरेश स्वेच्छाचारी और विधान-मण्डलों के प्रति अनुत्तरदायी बनाये जायें तो मैं कभी नहीं चाहूंगा कि यह शक्ति उन्हें दी जाये। परन्तु यह मानते हुये कि राज्यों के नरेश विधान-मण्डलों के प्रति उत्तरदायी बनाये जायेंगे, मैं इस अनुच्छेद का उस रूप में समर्थन करता हूं जिस रूप में इसे डॉ. अम्बेडकर ने उपस्थित किया है। मृत्यु-दण्ड के लघ्वादेशन की शक्ति बहुत महत्त्वपूर्ण है और हम यह नहीं चाहते कि कोई मृत्यु-दण्ड का मामला सीधे-सीधे प्रधान के सामने रखा जाये। गवर्नर अपने प्रान्त से अच्छी प्रकार परिचित रहता है और अपने प्रधान-मन्त्री से भी परामर्श ले सकता है और इसलिये उसे चाहिये कि इस संबंध में अपनी शक्ति का प्रयोग करे। प्रधान सारे भारत के लिये होगा। यदि इस प्रकार का मामला उसके सम्मुख रखा भी जायेगा तो उसे पहले गवर्नर से पूछताछ करनी होगी और गवर्नर अपने प्रधान-मन्त्री से पूछेगा। इस दृष्टि से मैं मि. तजम्मुल हुसैन के संशोधन का विरोध करता हूं।

***उपाध्यक्ष:** क्या डॉ. अम्बेडकर मि. तजम्मुल हुसैन द्वारा उपस्थित इस संशोधन पर कुछ कहना चाहते हैं?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** जी हां, श्रीमान्! यह उचित ही होगा कि मैं अनुच्छेद 59 में सन्निहित योजना की रूपरेखा को कुछ शब्दों में स्पष्ट कर दूं। वह इस प्रकार है: संघानीय कानूनों के अधीन घोषित अपराधों के लिये दिये हुये दण्ड के लघ्वादेशन की शक्ति संघ के प्रधान को प्राप्त होगी और राज्यों के विधान-मण्डलों के बनाये हुये कानूनों के अधीन घोषित अपराधों के लिये दिये हुये दण्ड के लघ्वादेशन की शक्ति राज्य के गवर्नरों को प्राप्त होगी। मृत्यु-दण्ड के संबंध में, चाहे वह संसद् द्वारा पारित कानून के अधीन दिया हुआ हो अथवा राज्यों के किसी कानून के अधीन दिया हुआ हो, लघ्वादेशन की शक्ति प्रधान को तथा संबंधित राज्य को, दोनों को प्राप्त होगी। योजना इस प्रकार है।

मेरे मित्र मि. तजम्मुल हुसैन के संशोधन का उद्देश्य यह है कि गवर्नर को मृत्यु-दण्ड के लघ्वादेशन की जो शक्ति दी गई है वह उससे ले लेनी चाहिये।

उपखण्ड (3) में उस प्रथा का सन्निवेश है, जो इस समय प्रवर्तन में है और जिसके अधीन मृत्यु-दण्ड के लघ्वादेशन की शक्ति गवर्नर और प्रधान दोनों को दी गई है। मसौदा-समिति के सम्मुख कोई ऐसा बलशाली तर्क उपस्थित नहीं किया गया जिसको दृष्टि में रखते हुये यह शक्ति गवर्नरों से वापस ले ली जाती। आखिर अपराध उसी विशेष क्षेत्र में किया जायेगा। गृह-मन्त्री किसी मृत्यु-दण्ड प्राप्त अपराधी से आये हुये दया के लिये प्रार्थना-पत्र के संबंध में गवर्नर को परामर्श देगा और चूंकि उसे उस क्षेत्र की तथा उस मामले की पूरी जानकारी होगी, वह ठीक-ठीक परामर्श दे सकेगा। इसलिये इसे हानिकारक नहीं समझा गया कि जो शक्ति इस समय गवर्नर को प्राप्त है वह उसी के पास रहने दी जाये। किन्तु एक अभिरक्षण रखा गया है। यदि किसी मृत्यु-दण्ड के संबंध में दया के लिये आया हुआ प्रार्थना-पत्र अस्वीकार हो जाये तो इस अनुच्छेद के प्रावधानों के अधीन अपराधी को इसकी स्वतन्त्रता होगी कि वह दया के लिये प्रधान के पास दूसरा प्रार्थना-पत्र भेजे और उसके यहां अपने भाग्य की परीक्षा करे। मेरे विचार से यदि मसौदे के अनुच्छेद को उसी रूप में स्वीकार कर लिया जाय तो इससे न किसी आधारभूत सिद्धान्त का अधिक हनन होगा और न कोई असुविधा ही होगी।

***उपाध्यक्ष:** अब मैं मि. तजम्मुल हुसैन के संशोधन पर मत लेता हूं।

प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 59 का खण्ड (3) निकाल दिया जाये।"

संशोधन गिर गया।

***उपाध्यक्ष:** अब मैं अनुच्छेद 59 पर मत लेता हूं। प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 59 विधान का अंग बना लिया जाये।"

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

अनुच्छेद 59 विधान का अंग बना लिया गया।

अनुच्छेद 60

***उपाध्यक्ष:** अब सभा विधान के मसौदे के अनुच्छेद 60 पर विचार करेगी मि. अहमद इब्राहीम संशोधन संख्या 1289 को उपस्थित कर सकते हैं।

***के.टी.एम. अहमद इब्राहीम साहब बहादुर** (मद्रास : मुस्लिम): मैंने इस संशोधन पर एक संशोधन की सूचना दी है।

***उपाध्यक्षः** जी हां। मुझे वह अभी मिली है। माननीय सदस्य महोदय उसे उपस्थित कर सकते हैं।

***के.टी.एम. अहमद इब्राहीम साहब बहादुरः** श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं किः

"अनुच्छेद 60 के खण्ड (1) का परादिक निकाल दिया जाये।"

मेरे संशोधन का उद्देश्य यह है कि कम से कम समवर्ती विषयों की सूची में दिये हुये विषयों के संबंध में राज्यों अथवा प्रान्तों की अधिशासी शक्तियों का परिरक्षण हो। सामान्य वादानुवाद के समय यह कहा गया था कि विधान के मसौदे की योजना यह है कि राज्यों की शक्तियां बहुत अंश में कम कर दी जायें। यद्यपि यह योजना संघानीय कही जाती है परन्तु वास्तव में विधान के मसौदे के द्वारा देश में एकात्मक शासन-प्रणाली को प्रयोग में लाने का आयोजन है। सामान्य वादानुवाद के समय सभी दलों के सदस्यों ने, चाहे उनकी किसी दल की विचारधारा के प्रति निष्ठा हो, विधान के मसौदे के इस अंग की निन्दा की है। उन्होंने बार-बार यह कहा कि इस विधान के मसौदे में जो भावना सन्निहित है वह एकात्मक शासन की है, न कि संघानीय शासन की।

श्रीमान्, विषयों की जो सूचियां तैयार की गई हैं और विधान के साथ सम्बद्ध की गई हैं, उनमें बहुत से ऐसे विषय, जो साधारणतया प्रान्तीय सूची में होते हैं, समवर्त्ती सूची और संघ-सूची में दिये हुये हैं और इसका यह परिणाम हुआ है कि प्रान्तीय सूची में बहुत कम विषय रह गये हैं। अनुच्छेद 60 (1) (क) में उन थोड़े से विषयों के संबंध में भी राज्यों से अधिशासी शक्ति ले ली गई है जो समवर्त्ती सूची में दिये हुये हैं। इससे, श्रीमान्, राज्य उस थोड़ी सी अधिशासी शक्ति से भी वंचित हो जायेंगे जो उन्हें इस परादिक के न रहने पर इस विधान के अधीन प्राप्त होती। यह कहा जा सकता है कि यह समान हितों, एकरूपता, रक्षा और सम्भाव्यताओं की दृष्टि से किया गया है। परन्तु मैं यह बताना चाहता हूं कि इस सीमित शक्ति को ले लेने की कोई आवश्यकता नहीं है.....

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** क्या मैं माननीय सदस्य महोदय को यह बता सकता हूं कि खण्ड (1) के परादिक को निकालने से सारी अधिशासी शक्ति और समवर्त्ती विषय केन्द्र के पास चले जायेंगे।

***के.टी.एम. अहमद इब्राहीम साहब बहादुरः** मैं इस पर आ रहा हूं।

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** इस परादिक को निकालने का परिणाम वही होगा जो मैंने बताया है।

***के.टी. एम. अहमद इब्राहीम साहब बहादुरः** मैं इस पर आ रहा हूं। इस कठिनाई को दूर करने के लिये मैंने एक अन्य संशोधन की सूचना दी है। वह इस प्रकार है कि अनुच्छेद 60 (1) (क) में "Parliament has" और "power" शब्दों के बीच में (हिन्दी में "संबंध में" और "संसद्" शब्दों के बीच में) "exclusive" (एकमात्र) शब्द रखा जाये। इसका परिणाम यह होगा कि संघ की अधिशासी शक्ति केवल उन विषयों तक सीमित रहेगी जिनके संबंध में एकमात्र उसी को कानून बनाने की शक्ति हो। मेरे विचार से इससे मेरे माननीय मित्र के सन्देह का निराकरण हो जायेगा। मेरे संशोधन के अनुसार अधिशासी शक्ति.....

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** क्या माननीय सदस्य महोदय को इस संशोधन को उपस्थित करने के लिये उपाध्यक्ष महोदय की आज्ञा मिल गई है?

***के.टी.एम. अहमद इब्राहीम साहब बहादुरः** उपाध्यक्ष महोदय ने कृपा करके इस संशोधन को उपस्थित करने की मुझे आज्ञा दे दी है और उस आज्ञा के अनुसार ही मैंने यह संशोधन उपस्थित किया है।

***श्री एल. कृष्णास्वामी भारती:** अब खण्ड किस प्रकार हो जाता है?

***के.टी.एम. अहमद इब्राहीम साहब बहादुरः** वह इस प्रकार पढ़ा जायेगा:

"Clause (1) (a) to the matters with respect to which Parliament has exclusive power to make laws."

(वे विषय जिनके संबंध में एकमात्र संसद् को विधि बनाने की शक्ति है।)

इसलिये संघ को उन विषयों के संबंध में अधिशासी शक्ति प्राप्त न होगी जिनके संबंध में एकमात्र उसी को कानून बनाने की शक्ति प्राप्त न होगी अर्थात् समवर्ती विषयों की सूची के विषयों के संबंध में। श्रीमान्, वर्तमान भारत सरकार

[के.टी.एम. अहमद इब्राहीम साहब बहादुर]

के अधिनियम के अधीन इस प्रकार का कोई प्रावधान नहीं है। मसौदा-समिति के सभापति ने विधान-परिषद् के माननीय अध्यक्ष महोदय को भेजे हुये अपने पत्र के पृष्ठ 6 के पैरा 7 में कहा है कि:

"वर्तमान विधान के अधीन समवर्ती विषयों की सूची के किसी विषय के संबंध में अधिशासी शक्ति संबंधित प्रान्त को प्राप्त है परन्तु कुछ दशाओं में केन्द्र को आदेश देने का अधिकार है।"

आगे उसमें कहा गया है–

"विधान के मसौदे में समिति ने इस योजना से थोड़ा-सा भिन्न मार्ग ग्रहण किया है।"

श्रीमान्, मैं यह बताना चाहता हूं कि उसने इस योजना से थोड़ा-सा भिन्न भाग ग्रहण नहीं किया है किन्तु उसने समवर्ती विषयों के संबंध में, प्रान्तों और राज्यों की शक्तियों के संबंध में केन्द्रीय सरकार के अपनी इच्छानुसार हस्तक्षेप करने के लिये एक सिंहद्वार, खुला दरवाजा तैयार कर दिया है जैसा कि परादिक ही से स्पष्ट हो जाता है:

"पर इस विधान में अथवा संसद् द्वारा निर्मित किसी कानून में, स्पष्टतया प्रावहित तिथि के अतिरिक्त इस खण्ड के उपखण्ड (क) में निर्दिष्ट अधिशासी शक्ति का विस्तार किसी राज्य में उन विषयों पर न होगा जिनके संबंध में राज्य के विधान-मण्डल को भी कानून बनाने की शक्ति है।"

इस प्रकार संघीय सरकार को समवर्ती विषयों की सूची में दिये हुये विषयों के संबंध में विधान द्वारा निश्चित सीमा तक ही अधिशासी शक्ति प्राप्त नहीं है किन्तु समय-समय पर संसद् भी कानून द्वारा समवर्ती विषयों की सूची के विषयों के संबंध में संघीय सरकार को अधिशासी शक्ति प्रदान कर सकती है जिसका परिणाम यह होगा कि कुछ समय बाद सब विषय समवर्ती विषयों की सूची से हटा कर संघानीय सूची में रख दिये जायेंगे। श्रीमान्, यह उचित नहीं है कि प्रान्तीय स्वायत्त शासन का इस सीमा तक शून्यन कर दिया जाय। व्यवहार में यही होके रहेगा। श्रीमान्, मुझे ज्ञात है कि इस कठिनाई को दूर करने के लिये मेरे माननीय मित्र पंडित कुंजरू ने इस आशय के एक संशोधन की सूचना दी है कि–"or in any law made by Parliament" (अथवा संसद् द्वारा निर्मित किसी विधि में) शब्द निकाल दिये जायें। एक प्रकार से इससे कठिनाई दूर हो

जायेगी परन्तु पूरी कठिनाई दूर न होगी। इसी कारण मैं अपने संशोधन पर ज़ोर दे रहा हूं: श्रीमान्, वर्तमान भारत शासन अधिनियम के अधीन यद्यपि इन विषयों के संबंध में केन्द्रीय सरकार प्रान्तीय सरकारों को निर्देश कर सकती है किन्तु व्यवहार में यदि इस शक्ति का प्रयोग करके केन्द्रीय सरकार कोई बाधा डाले तो प्रान्तीय सरकारें अपना प्रशासन चला ही नहीं सकती हैं। अपने मन्त्रियों से हमने प्राय: यह सुना है कि केन्द्रीय सरकार के निर्देशों से वे सहमत नहीं हैं परन्तु वे लाचार हैं और जो कुछ वे सबसे हितकर भी समझते हैं उसे भी नहीं कर सकते। खाद्य-नीति के संबंध में भी वे कहते हैं कि प्रान्त के लिये जो सबसे हितकर कार्य है, उसे भी वे नहीं कर सकते क्योंकि उन्हें केन्द्रीय सरकार के निर्देशों का पालन करना है। प्राय: दिल्ली से मद्रास वापस आने पर हमारे मन्त्री कहते हैं कि यद्यपि वे केन्द्रीय सरकार के विचारों से सहमत नहीं हैं परन्तु उन्हें उसके निर्देशों का पालन करना है क्योंकि वे कानून के अधीन दिये गये हैं। उन्हें उसके निर्देशों का पालन करना ही होता है भले ही उनका यह विश्वास हो कि किसी विषय विशेष के संबंध में केन्द्र द्वारा निश्चित नीति सफल न होगी।

श्रीमान्, मुझे आशा है कि यह सभा इस संशोधन के महत्त्व को समझेगी। जैसा कि मैं बता चुका हूं, प्रान्तीय सरकारों से उनकी बहुत सी शक्तियां ले ली गई हैं और यदि इस खण्ड को भी रहने दिया जायेगा तो प्रान्तीय स्वायत्त-शासन का लगभग शून्यन ही हो जायेगा। वर्तमान प्रावधानों के अधीन भी प्रान्त केवल प्रतिष्ठा प्राप्त जिला बोर्डों और नगर-समितियों के समान ही रह जायेंगे और समवर्ती विषयों की सूची के विषयों के संबंध में संघीय सरकार को अधिशासी शक्ति देने के लिये संसद् को कानून बनाने की शक्ति प्रदान करने के संबंध में इस खण्ड को बनाये रखना भी प्रान्तीय स्वायत्त-शासन की चिता में एक और लकड़ी डालने के समान ही होगा।

***उपाध्यक्ष:** संशोधन संख्या 44 और 45 एक साथ उपस्थित किये जा सकते हैं।

***पण्डित हृदयनाथ कुंजरू** (संयुक्तप्रान्त : जनरल): उपाध्यक्ष महोदय, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

> "संशोधन संख्या 1289 के संबंध में, अनुच्छेद 60 के खण्ड (1) के परादिक में से 'or in any law made by Parliament' (अथवा संसद् द्वारा निर्मित किसी विधि में) शब्द निकाल दिये जायें" और

[पं. हृदयनाथ कुंजरू]

"संशोधन संख्या 1289 के संबंध में, अनुच्छेद 60 के खण्ड (1) के बाद निम्नलिखित खण्ड प्रविष्ट किया जाये:

" '(1a) Any power of Parliament to make laws for a State with respect to any matter specified in entries 25 to 37 of the Concurrent List shall include power to make laws as respects a State conferring powers and imposing duties, or authorising the conferring of powers and the imposition of duties upon the Government of India or officers and authorities of the Government of India as respects that matter, notwithstanding that it is one with respect to which the Legislature of the State also has power to make laws.' "

[(1क) समवर्ती विषयों की सूची की 25 से 37 तक की प्रवेष्टियों में उल्लिखित किसी विषय के संबंध में किसी राज्य के लिये कानून बनाने की संसद् की शक्ति में किसी राज्य के संबंध में ऐसे कानून बनाने की शक्ति भी सम्मिलित है जिनसे भारत सरकार अथवा भारत सरकार के अधिकारियों तथा प्राधिकारियों को उस विषय के संबंध में शक्तियां प्रदान होती हों तथा उनके कर्त्तव्य निश्चित होते हों, चाहे उस विषय के संबंध में राज्य के विधान-मण्डल को भी कानून बनाने की शक्ति प्राप्त हो।]

श्रीमान्, संघान कई प्रकार के हैं। उदाहरणार्थ, संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा और आस्ट्रेलिया के संघान हैं। परन्तु इनमें से किसी देश के संघानीय विधान में केन्द्रीय सरकार को प्रान्तों तथा राज्यों की सरकारों को अधिशासन संबंधी निर्देश करने का अधिकार प्राप्त नहीं है। कनाडा में दो विषयों के संबंध में अर्थात् कृषि और प्रवास के संबंध में उपनिवेश की तथा प्रान्तों की सरकारों को कानून बनाने की समवर्ती शक्तियां प्राप्त हैं। आस्ट्रेलिया में बहुत से ऐसे विषय हैं जिनके संबंध में कामनवेल्थ की और राज्यों की सरकारें दोनों कानून बना सकती हैं। किन्तु इनमें से किसी भी देश में केन्द्रीय सरकार, राज्यों अथवा प्रान्तों की सरकारों को यह निर्देश नहीं कर सकती है कि वे अपने प्राधिकार को विशेष प्रकार प्रयोग में लायें। हमारे विधान में इस सिद्धान्त का अनुसरण नहीं किया गया है। भारत शासन अधिनियम, सन् 1935 ई., के अधीन कुछ प्रश्नों के संबंध में केन्द्रीय सरकार, प्रान्तीय सरकारों को निर्देश कर सकती है। वे प्रश्न या तो उन विषयों के संबंध में हैं जो एकमात्र केन्द्रीय विधान-मण्डल के अधिकार-क्षेत्र में हैं अथवा जो

समवर्त्ती विषयों की सूची के भाग 2 में दिये हुये हैं। यदि अनुच्छेद 60 के परादिक की भाषा स्वीकार कर ली जाये तो केन्द्रीय सरकार को समवर्त्ती विषयों की सूची के सभी विषयों के संबंध में प्रान्तीय सरकारों को यह निर्देश करने का अधिकार होगा कि वे अपने अधिशासी प्राधिकार को किस प्रकार प्रयोग में लायें। हमने इस पर विचार करना है कि क्या ऐसी परिस्थिति उत्पन्न हो गई है कि केन्द्रीय सरकार को इस प्रकार की शक्ति देना वांछनीय अथवा आवश्यक हो गया है।

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** क्या मैं माननीय सदस्य महोदय को यह बता सकता हूं कि जब संसद् कानून बनायेगी और यह शक्ति प्रदान करेंगी तभी किसी राज्य के संबंध में यह शक्ति प्राप्त होगी?

***पण्डित हृदयनाथ कुंजरू:** मैं इसे अच्छी प्रकार समझता हूं। यह स्पष्ट ही है। यदि श्री सन्तानम् कुछ देर तक मेरी बातें सुनते रहे तो वे देखेंगे कि मैं इस विषय की ओर संकेत करना न भूलूंगा।

श्रीमान्, मुझे इसका कोई कारण प्रतीत नहीं होता कि केन्द्रीय सरकार को इतनी अधिक शक्ति क्यों दे दी जाये। विधान के स्वरूप के संबंध में हमारे विचार स्पष्ट होने चाहिये। हम ऐसे देशों के अनुभव से लाभ उठा सकते हैं जिनके संघानीय विधान हैं और यद्यपि इसकी आवश्यकता नहीं है कि हम उनके विधानों की अक्षरश:, नकल करें परन्तु यह आवश्यक है कि संघानीय सिद्धान्त के सारभूत अंगों का आदर किया जाय। हमें सद्यस्कृत्यस्थिति के संबंध में केन्द्रीय सरकार को अधिक शक्ति देने में इतना आगे न बढ़ना चाहिये कि प्रान्तीय सरकारें केन्द्रीय सरकार के अधीन हो जायें। यदि संघानीय सिद्धान्त को प्रभाव में लाना है तो चाहे केन्द्रीय सरकार को जो कोई भी शक्तियां दी जायें किन्तु प्रान्तीय क्षेत्रों में प्रान्तीय सरकारें केन्द्रीय सरकार की दासियां नहीं होनी चाहिये बल्कि उसकी सहयोगिनियां होनी चाहियें। यदि सभा इस सिद्धान्त को स्वीकार करती है तो मेरे विचार से यह स्पष्ट हो जायेगा कि विचाराधीन अनुच्छेद का परादिक उन संबंधों के विपरीत है जो केन्द्र और प्रान्तीय सरकारों के न्यायोचित रूप से होने चाहियें। माननीय सदस्य जानते हैं कि परादिक इस प्रकार है:

"पर इस संविधान में अथवा संसद् द्वारा निर्मित किसी कानून में, स्पष्टतया प्रावहित स्थिति के अतिरिक्त इस खण्ड के उपखण्ड (क) में

[पं. हृदयनाथ कुंजरू]

निर्दिष्ट अधिशासी शक्ति का विस्तार किसी राज्य में उन विषयों पर न होगा जिनके संबंध में राज्य के विधान-मण्डल को भी कानून बनाने की शक्ति है।"

यदि इसे स्वीकार कर लिया गया तो केन्द्रीय विधान-मण्डल को इसकी स्वतंत्रता होगी कि वह प्रान्तीय सरकारों को कानून को प्रयोग में लाने की विधि के संबंध में निर्देश करे। भारत शासन अधिनियम, सन् 1935 ई., के अधीन केन्द्रीय सरकार को इस प्रकार की शक्ति प्राप्त थी परन्तु वह इससे अधिक आयंत्रित थी। भारत शासन अधिनियम, सन् 1935 ई., की धारा 126 की उपधारा (2) में कहा गया है कि अधिराज्य के अधिशासी प्राधिकार का विस्तार प्रान्तों को दिये जाने वाले उन निर्देशों तक भी होगा जो अधिराज्य के विधान-मंडल के किसी भी ऐसे अधिनियम को प्रयोग में लाने के संबंध में हो जो समवर्ती विषयों की सूची के भाग 2 में उल्लिखित किसी विषय के बारे में हो और जिसमें इस प्रकार के निर्देश देने की आज्ञा हो और यह भी कहा गया है कि इस विषय के संबंध में कोई विधेयक अथवा संशोधन उस समय तक उपस्थित नहीं किया जा सकता है जब तक कि गवर्नर जनरल की आज्ञा पहले से न प्राप्त कर ली गई हो। नई व्यवस्था में, यह स्पष्ट है कि गवर्नर जनरल को, जो राज्य का वैधानिक प्रमुख होगा, वह शक्ति नहीं दी जा सकती है जो इस उपधारा द्वारा गवर्नर जनरल को दी गई है। परन्तु इसका कोई कारण नहीं दिखाई देता कि भारत शासन अधिनियम, सन् 1935 ई., की धारा 126 की उपधारा (2) द्वारा प्रदान की हुई शक्ति को उस विस्तृत रूप में रखा जाये जैसे कि वह विधान के मसौदे के अनुच्छेद 60 के परादिक में रखी गई है। यह सच है कि किसी कानून को प्रयोग में लाने के संबंध में केन्द्रीय सरकार को प्रान्तीय सरकारों को तब तक निर्देश देने का अधिकार न होगा जब तक कानून ही में यह प्रावहित न हो कि इस प्रकार के निर्देश दिये जाने चाहिये। परन्तु इससे केन्द्रीय विधान-मण्डल की शक्ति किसी प्रकार अवरुद्ध नहीं होती है। केन्द्रीय सरकार ही इसका निर्णय करेगी कि उसके प्रति जो सरकार उत्तरदायी है उसे यह शक्ति देना उचित है अथवा नहीं। मेरे संशोधन का उद्देश्य यह है कि प्रान्तीय सरकारों की शक्तियों में केन्द्रीय विधान-मण्डल और केन्द्रीय सरकार द्वारा अनावश्यक रूप से हस्तक्षेप न होने दिया जाये।

श्रीमान्, मुझसे यह कहा जा सकता है कि यदि परादिक से 'or in any law made by Parliament' (अथवा संसद् द्वारा निर्मित किसी विधि में) शब्द निकाल दिये गये तो केन्द्रीय सरकार को वह सीमित शक्ति भी प्राप्त न होगी जो उसे भारत शासन अधिनियम, सन् 1935 ई., की धारा 126 की उपधारा (2)

से प्राप्त है। मेरे विचार से, श्रीमान्, अनुच्छेद 234 के अधीन इसे प्रावहित किया जा सकता है। इसलिये मैंने अनुच्छेद 234 के संबंध में एक संशोधन की सूचना दी है जिससे, यदि केन्द्रीय विधान-मण्डल, केन्द्रीय सरकार को इस संबंध में अधिकार दे तो वह समवर्ती विषयों की सूची के विषय 25 से 37 तक के बारे में प्रान्तीय सरकारों को कानूनों को प्रयोग में लाने के संबंध में निर्देश दे सकेगी।

एक और बात है जिसकी ओर सभा का ध्यान आकृष्ट करना आवश्यक होगा। मेरे संशोधन का दूसरा भाग भारत शासन अधिनियम, सन् 1935 ई., में जो कुछ कहा गया है उससे आगे बढ़ गया है। मुझसे यह पूछा जा सकता है कि जब मेरे संशोधन का उद्देश्य यह है कि प्रान्तीय सरकारों को केन्द्रीय सरकार द्वारा संसद् के बनाये हुये कानूनों के अधीन दी हुई आज्ञाओं से प्रान्तीय सरकारों की अधिशासी शक्ति अनावश्यक रूप से आयन्त्रित न हो तो मैं क्यों केन्द्रीय विधान-मण्डल की और उसके द्वारा केन्द्रीय सरकार की शक्ति में वृद्धि चाहता हूं। माननीय सदस्यों को स्मरण होगा कि कुछ सप्ताह पूर्व उप-प्रधान मन्त्री महोदय ने इस सभा में एक विधेयक उपस्थित किया था जिसका उद्देश्य यह था कि भारत शासन अधिनियम, सन् 1935 ई., में संशोधन किया जाये। विधेयक के साथ सम्बद्ध उद्देश्य और कारणों के वक्तव्य में यह कहा गया था कि अनुभव से यह सिद्ध हुआ है कि केन्द्रीय और प्रान्तीय औद्योगिक न्यायाधिकरणों के निर्णयों पर पुनर्विचार केन्द्रीय सरकार के नियन्त्रण में समान सिद्धान्तों के अनुसार होना चाहिये। इसलिये विधेयक में यह प्रस्ताव रखा गया था कि केन्द्रीय सरकार को केवल इसी का अधिकार नहीं है कि वह प्रान्तीय सरकारों को निर्देश दे कि वे अपने प्राधिकार किस प्रकार प्रयोग में लायें किन्तु उसे इसकी भी शक्ति है कि वह समवर्ती विषयों की सूची में दिये हुये विषयों के संबंध में, कानूनों को प्रयोग में लाने के लिये अपने अधिकारियों को शक्ति प्रदान करे। मैं उस विधेयक के गुण-दोषों पर विचार नहीं करना चाहता परन्तु हमें इस पर अवश्य विचार करना है कि वर्तमान परिस्थिति में केन्द्रीय सरकार की शक्तियों को इतना विस्तृत करना आवश्यक है या नहीं कि कुछ विषयों के संबंध में, यदि संसद् द्वारा निर्मित कोई कानून इसकी आज्ञा देता है, वह अपने अधिकारियों के कर्त्तव्य निश्चित कर सके। माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल द्वारा प्रस्तुत विधेयक का संबंध औद्योगिक तथा कुछ अन्य विषयों से है। मोटे तौर से ये विषय विधान के मसौदे में दी हुई समवर्ती विषयों की सूची के 25 से 37 तक के विषयों के अन्तर्गत आ जाते हैं। ये विषय, दो विषयों को छोड़ कर, वही हैं जो भारत शासन अधिनियम, सन्

[पं. हृदयनाथ कुंजरू]

1935 ई., को समवर्ती विषयों की सूची के भाग 2 में दिये हुये हैं। वर्तमान परिस्थिति में, जब श्रमिकों में अपने अधिकारों की चेतना आ रही है और जब उनके प्रश्नों का निर्णय अखिल भारतीय आधार पर करना होता है, यह न्यायोचित ही प्रतीत होता है कि ऐसे सब प्रश्नों के संबंध में, जिनमें श्रमिकों और मालिकों के विवाद का निर्णय करना होता है, शक्ति का किसी स्थान पर संकेन्द्रण होना चाहिये ताकि महत्त्वपूर्ण प्रश्नों को समान रूप से हल किया जा सके। मुझे ज्ञात नहीं है कि सरदार पटेल द्वारा प्रस्तुत विधेयक पर इस सभा में कब विचार होगा। परन्तु मुझे इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है कि उन्होंने जिस शक्ति को प्रदान करने की मांग की है उसे यह सभा केन्द्रीय सरकार को समर्पित कर देगी। यदि यह किया गया तो यह स्पष्ट है कि विधान के मसौदे में इस प्रकार संशोधन करने होंगे कि वह भारत शासन अधिनियम, सन् 1935 ई., के अनुरूप हो सके। मैंने इस आवश्यकता का पहले से अनुभव किया है और इसलिये इस आशय का एक संशोधन उपस्थित किया है कि अधिराज्य की संसद् को यह अधिकार होगा कि वह समवर्ती विषयों की सूची की 25 से 37 तक की प्रविष्टियों के संबंध में, केन्द्रीय सरकार अथवा उसके किसी अधिकारी को शक्ति दे अथवा उसके कर्त्तव्य निश्चित करे। श्रीमान्, मेरे विचार से मेरे संशोधन से इस विषय संबंधी सभी आवश्यकतायें पूरी हो जाती हैं। इसका कोई भी कारण नहीं है कि केन्द्रीय सरकार को ऐसी विस्तृत शक्ति दी जाय जो इस परादिक के स्वीकार किये जाने पर केन्द्रीय संसद् द्वारा बनाये हुये कानूनों के अधीन केन्द्रीय अधिशासी वर्ग को प्राप्त हो जायेगी।

श्रीमान्, अपनी जगह पर जाने के पूर्व मैं एक और विषय की ओर संकेत करना चाहता हूं। भारत शासन अधिनियम, सन् 1935 ई., के अधीन अधिराज्य के विधान-मण्डल की ऐसे कानून बनाने की शक्ति, जिनसे केन्द्रीय सरकार को अपने अधिकारियों को उन विषयों के बारे में शक्ति देने अथवा उनके कर्त्तव्य निश्चित करने का अधिकार मिलता हो, जिनके संबंध में प्रान्तीय विधान-मण्डल भी कानून बना सकते हों, केवल उसी समय प्रयोग की जा सकती थी जब सद्यस्कृत्यस्थिति की घोषणा की जाती थी जिसमें यह कहा जाता था कि भारत की सुरक्षा युद्ध के कारण संकट में पड़ गई है। श्रीमान्, जहां तक मुझे स्मरण है, किसी भी अन्य स्थिति में केन्द्रीय विधान-मण्डल को केन्द्रीय सरकार को इस प्रकार का अधिकार नहीं देने की शक्ति न थी और न केन्द्रीय अधिकारियों को यह शक्ति दी जाती थी कि वे समवर्त्ती विषयों की सूची के विषय संबंधी कानूनों का प्रयोग कर सकें। इसलिये मेरे दूसरे संशोधन में यह देखा जा सकता

है कि मैंने भारत शासन अधिनियम, सन् 1935 ई., के प्रावधानों की नकल नहीं की है। मैंने उस अधिनियम के प्रावधानों के मार्ग से बहुत ही भिन्न मार्ग ग्रहण किया है किन्तु यह मैंने तभी किया है जब मैंने यह देखा कि विशेष परिस्थितियों में यह आवश्यक है। मेरे माननीय मित्र डॉ. अम्बेडकर के लिये यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि जिस विस्तृत शक्ति की उन्होंने मांग की है वह वर्तमान परिस्थिति में, भारत में कानून और व्यवस्था की रक्षा के लिये अथवा उसकी सुरक्षा को संकट में न पड़ने देने के लिये आवश्यक है अथवा इसलिये भी आवश्यक है कि नवीन परिस्थिति में ऐसी समस्यायें उत्पन्न हो गई हैं कि उनको तभी हल किया जा सकता है जब कि प्रान्तीय सरकारों को केन्द्रीय सरकार के बहुत कुछ अधीन कर दिया जाये। मेरी यह धारणा है कि इस प्रकार की कोई परिस्थिति उपस्थित नहीं हुई है और इसीलिये मैंने इन संशोधनों को प्रस्तुत किया है। श्रीमान्, मुझे आशा है कि यह सभा इन पर सावधानी से विचार करेगी।

(संशोधन संख्या 1290 और 1291 उपस्थित नहीं किये गये।)

***उपाध्यक्ष:** संशोधन संख्या 1292 को उपस्थित करने की आज्ञा नहीं दी जाती है क्योंकि यह एक शाब्दिक संशोधन है।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** वह केवल शाब्दिक ही नहीं है। उससे आशय बदल जायेगा। वास्तव में मेरे संशोधन द्वारा एक भिन्न ही प्राधिकारी अस्तित्व में आ जायेगा।

***उपाध्यक्ष:** मुझे खेद है कि मैं आपसे सहमत नहीं हूं।

संशोधन संख्या 1293 को उपस्थित करने की आज्ञा नहीं दी जाती क्योंकि वह शाब्दिक है।

अब अनुच्छेद पर सामान्य वादानुवाद हो सकता है। मि. मोहम्मद इस्माइल साहब।

***श्री मोहम्मद इस्माइल साहब** (मद्रास : मुस्लिम): श्रीमान्, मि. के.टी. एम. अहमद इब्राहीम ने जिन संशोधनों को उपस्थित किया है उनका मैं समर्थन करता हूं। मेरा भी इनको उपस्थित करने का इरादा था और मैंने इसकी सूचना दे दी थी। श्रीमान्, अनुच्छेद 60 के नीचे लिखे हुये लेख में मसौदा-समिति ने कहा है कि–

"समिति ने इस परादिक को इस दृष्टि से प्रविष्ट किया है कि जब तक विधान में अथवा संसद् के बनाये हुये किसी कानून में अन्य प्रकार

[श्री मोहम्मद इस्माइल साहब]

का प्रावधान न हो, समवर्ती विषयों की सूची के विषयों के संबंध में अधिशासी शक्ति मुख्यत: संबंधित राज्य को ही प्राप्त होनी चाहिये।"

इस लेख से पाठकों के मस्तिष्क में यह प्रभाव पड़ता है कि इस अनुच्छेद में प्रत्यक्षत: जितनी शक्ति सन्निहित है उससे अधिक शक्ति अथवा कुछ शक्ति प्रान्तों को देने का प्रयास किया जा रहा है परन्तु मसौदा-समिति के सभापति ने विधान-परिषद् के अध्यक्ष को जो पत्र लिखा है उसके पैरा 7 को पढ़ने से यह धारणा मिट जाती है। वे परादिक के परित्राण खण्ड के बारे में कहते हैं कि–

"इस परित्राण खण्ड का प्रभाव यह होगा कि नवीन विधान के अधीन संघीय संसद् को इसकी स्वतन्त्रता होगी कि वह संघ के प्राधिकारियों को अधिशासी शक्ति प्रदान करे और यदि आवश्यक हो तो संघ के प्राधिकारियों को इस संबंध में निर्देश दे कि राज्यों के प्राधिकारी अधिशासी शक्ति को किस प्रकार प्रयोग करें।"

अपने आगे के वाक्य से वे इसे और भी स्पष्ट कर देते हैं। वे कहते हैं:

"इस प्रावधान को रखते समय समिति ने इस सिद्धान्त को दृष्टि में रखा कि अधिशासी प्राधिकार का विस्तार विधायी शक्ति के समान ही होना चाहिये।"

जहां कहीं केन्द्र को विधायी शक्ति दी गई है उसे अधिशासी शक्ति देने का भी प्रयास किया जा रहा है। हमारे संशोधनों में इस स्थिति के दोषों को दूर करने का प्रयास किया गया है और यह कहा गया है कि समवर्त्ती विषयों की सूची के विषयों के संबंध में केन्द्र को भले ही विधायी शक्ति प्राप्त हो किन्तु अधिशासी शक्ति इकाइयों को अर्थात् प्रान्तों को प्राप्त होनी चाहिये। श्रीमान्, इस विधान की योजना के संबंध में मैंने कुछ बातें कहनी हैं। यह कहा गया है कि अमेरिका के विधान का आधार केन्द्र के प्राधिकारियों का यह सन्देह था कि जब कभी अवसर मिलेगा केन्द्र में पदारूढ़ व्यक्ति राज्यों की अर्थात् संघान के अंगों की अथवा इकाइयों की तथा लोगों की शक्तियों में हस्तक्षेप करने का प्रयास करेंगे। उस विधान की रचना के समय तथा उसके उपरान्त यह तर्क उपस्थित किया गया था और वर्तमान काल में भी यह कहा गया है कि विधान के संबंध में यह धारणा वास्तविकता पर आधृत है क्योंकि यह मानी हुई बात है कि जब लोग शक्ति प्राप्त कर लेते हैं तो वह उन्हें प्राय: भ्रष्ट कर देती है। इसलिये अधिशासी-वर्ग और सर्वोच्च प्राधिकारी को बहुत शक्ति प्रदान नहीं करनी चाहिये। परन्तु जहां तक हमारे विधान का संबंध है, इसमें इससे विपरीत मार्ग का अवलंबन किया गया

है। यह व्यक्तियों तथा संघांगों के प्रति सन्देह पर आधृत है। यह कल्पना की गई है कि प्राधिकार को मिटाने के लिये व्यक्ति हमेशा कुचक्र रचते रहेंगे और षड्यन्त्र करते रहेंगे और संघांग हमेशा कोई न कोई उत्पात करने का प्रयास करते रहेंगे। इसलिये, श्रीमान्, यद्यपि विधान के मसौदे की योजना का आधार संघानीय बताया गया है परन्तु वास्तव में केन्द्र को ही अत्यधिक शक्ति दे दी गई है। कम से कम देश की वर्तमान परिस्थिति को देखते हुये यह उपयुक्त व्यवस्था नहीं है। यह देश के लिये हितकर सिद्ध न होगी। हमारे देश का वृहत् क्षेत्र तथा वृहत् जनसंख्या है। इसलिये केन्द्र को अत्यधिक शक्ति देना सुयोग्य शासन के हित में न होगा। संघांगों को पर्याप्त शक्ति प्राप्त होनी चाहिये। विधान इस विचार पर आधृत न होना चाहिये कि देशभक्ति और लोगों के हितचिंतन का ठेका एकमात्र केन्द्र का ही है। यह स्वीकार किया जाना चाहिये कि प्रान्त में और लोग भी देशभक्त हैं। इसलिये उनके अधिकारों तथा उनकी शक्तियों में हस्तक्षेप करने का प्रयास न करना चाहिये। यह विधान पहले तो लोगों के प्रति और फिर संघांगों के प्रति सन्देह पर आधृत है। श्रीमान्, जहां तक लोगों का संबंध है, यह भी स्वीकार नहीं किया गया है कि लोगों को कोई ऐसा वैयक्तिक स्वातन्त्र्य प्राप्त है जो कम नहीं किया जा सकता है। अनुच्छेद 15 में जिस वैयक्तिक स्वातन्त्र्य का प्रावधान है उसमें ऐसे गम्भीर-गंभीर ही नहीं बल्कि घातक परिवर्तन कर दिये गये हैं कि उनसे वैयक्तिक स्वातन्त्र्य के अधिकार का बिल्कुल शून्यन हो गया है। यह स्वीकार नहीं किया गया है कि किसी व्यक्ति को कोई ऐसा वैयक्तिक स्वातन्त्र्य प्राप्त है जिसका किसी कानून द्वारा परिहरण नहीं हो सकता है। प्रान्तों और संघांगों के संबंध में भी यही भावना दिखाई गई है। विभिन्न प्रावधानों से प्रान्तों की शक्तियों को ले लेने का प्रयास किया गया है। मेरे विचार से सुशासन और सुयोग्य शासन के लिये यह भावना हितकर न होगी और इसलिये संघांगों की शक्तियों में हस्तक्षेप न होना चाहिये।

हमारे संशोधनों में जहां केन्द्र के लिये उपयुक्त विषयों के संबंध में विधायी शक्ति प्रावहित की गई है तो केन्द्र की अधिशासी शक्ति आयन्त्रित भी की गई है। इसलिये मेरे विचार से ये बहुत ही तर्कपूर्ण संशोधन है और इस सभा को इनका समर्थन करना चाहिये। मैं यह भी जानता है कि यदि सदस्यों को अपनी इच्छानुसार मत देने का अधिकार दिया गया और, कम से कम, यदि उन्हें इस प्रस्ताव पर मत देने की स्वतन्त्रता दी गई तो, श्रीमान्, बहुत से सदस्य इन संशोधनों के पक्ष में मत देंगे। श्रीमान्, मुझे ज्ञात है कि इन संशोधनों के संबंध में बहुत से सदस्यों के वही विचार हैं जो मेरे हैं।

***उपाध्यक्षः** क्या मैं यह सुझा सकता हूं कि इन बातों की आवश्यकता नहीं है।

***मोहम्मद इस्माइल साहब बहादुरः** श्रीमान्, इस महत्त्वपूर्ण विषय के संबंध में अपने साथियों के जो विचार मुझे ज्ञात हैं उन्हें मैं आपकी अनुमति से बता रहा हूं। इन संशोधनों से सरकार के कार्यकौशल में वृद्धि होगी जिससे देश का तथा देशवासियों का हितसाधन हो सकेगा। इन संशोधनों का उद्देश्य यह है कि भविष्य में केन्द्र और प्रान्तों के बीच कलह की बहुत कम संभावना रह जाये। यदि केन्द्र समय-समय पर संघांगों के अधिकारों और उनकी शक्तियों में हस्तक्षेप करता रहेगा तो अवश्य ही कलह होगा। इन संशोधनों द्वारा इस प्रकार के कलह की संभावना को मिटा देने का प्रयास किया गया है। मैं इसे स्पष्ट करना चाहता था कि सभा में केवल मेरी ही ऐसी भावना अथवा सम्मति नहीं है परन्तु कई अन्य सदस्यों की भी, चाहे वे किसी भी दल के क्यों न हों, यही सम्मति है। इसलिये मेरी बहुत इच्छा है कि मेरे इस सभा के साथियों को अपनी इच्छानुसार मत देने की स्वतन्त्रता दी जाये। इस दशा में मसौदा-समिति के सभापति को यह ज्ञात हो जायेगा कि इन संशोधनों में प्रतिपादित विचारों से इस सभा के सदस्य वास्तव में सहमत हैं अथवा नहीं। यदि मसौदा-समिति के सभापति इन संशोधनों को स्वीकार करना उचित न समझें तो क्या मैं उनसे अनुरोध कर सकता हूं कि वे कम से कम हमारे संशोधनों पर पण्डित कुंजरू के उपस्थित किये हुये संशोधन को स्वीकार कर लें जिसका आशय यह है कि "or in any law made by Parliament" (अथवा संसद् द्वारा निर्मित किसी विधि में) शब्द निकाल दिये जायं। इससे कम से कम कुछ तो सुधार हो जायेगा। इससे कम से कम कुछ सीमा तक वे दशायें मिट जायेंगी जिनकी मैंने कल्पना की है और जिनके संबंध में मैं अपने विचार व्यक्त कर चुका हूं। इससे कम से कम कुछ सीमा तक प्रान्तों की शक्तियों में हस्तक्षेप न हो सकेगा। इसलिये मैं सभा से तथा मसौदा-समिति के सभापति से अनुरोध करता हूं कि कम से कम उस साधारण संशोधन पर विचार किया जाये जिसका उद्देश्य "or in any law made by Parliament" (अथवा संसद् द्वारा निर्मित किसी विधि में) शब्दों को निकालना है।

***उपाध्यक्षः** मुझे अभी सूचना मिली है कि आसाम के गवर्नर, सर अकबर हैदरी की एकाएक मृत्यु हो गई है। वे इस सभा के सदस्य नहीं थे परन्तु हम

सबको ज्ञात है कि उन्होंने हमारे देश के लिये कितना उत्कृष्ट कार्य किया है और हमें यह भी ज्ञात है कि हम केवल उन्हीं के आभारी नहीं हैं बल्कि उनके पिता जी के भी आभारी हैं। भारत सरकार के दफ्तर बन्द हो चुके हैं। यह सच है कि श्रीमान् गवर्नर महोदय इस सभा के सदस्य न थे किन्तु मेरे विचार से उनके प्रति अपने सम्मान तथा आदर की भावना व्यक्त करने के लिये हमें सभा स्थगित कर देनी चाहिये।

सभा कल प्रातः दस बजे तक के लिये स्थगित होती है।

इसके पश्चात् विधान-परिषद् बृहस्पतिवार, ता० 30 दिसम्बर सन् 1948 ई. के प्रातः दस बजे तक के लिये स्थगित हो गई।